ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

भादों-आश्विन, संवत् नानकशाही ५४२
सितंबर 2010 वर्ष ४ अंक १

संपादक *सहायक संपादक*
सिमरजीत सिंघ सुरिंदर सिंघ निमाणा
एम. ए, एम. एस. सी. *एम. ए (हिंदी, पंजाबी), बी. एड.*

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव
धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-57-58-59

एक्सटेंशन नंबर

वितरण विभाग **303**
संपादन विभाग **304**

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

आवहु सिख सतिगुरू के पिआरिहो गावहु सची बाणी ॥
बाणी त गावहु गुरू केरी बाणीआ सिरि बाणी ॥
जिन कउ नदरि करमु होवै हिरदै तिना समाणी ॥
पीवहु अंम्रितु सदा रहहु हरि रंगि जपिहु सारिगपाणी ॥
कहै नानकु सदा गावहु एह सची बाणी ॥२३॥ *(पन्ना ९२०)*

तीसरे पातशाह श्री गुरु अमरदास जी महाराज रामकली राग में उच्चारण की गई पावन बाणी अनंदु साहिब की इस पउड़ी में समूह गुरु नानक नाम-लेवा सिक्खों को गुरबाणी रूपी अमृत-जल से जुड़कर सच्चा मानसिक और आत्मिक आनंद प्राप्त करने का रूहानी मार्ग अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं।

सतिगुरु जी कथन करते हैं कि हे सच्चे गुरु के प्रिय सिक्खो! आओ सच्ची अथवा सदैव स्थिर एवं सभी युगों में कायंम रहने वाली बाणी को गायन करो भाव सच्चे गुरु के मुखारबिंद से उच्चारण किये अगंमी बोलों को प्यार के आवेश में गायन करो। गुरु पातशाह इस नसीहत रूपी प्रेरणा पर और अधिक बल देते हुए फरमान करते हैं कि गुरु द्वारा उच्चारण की उस बाणी को गाओ जो सभी उच्चारण किये वाक्यों से उत्तम अथवा सर्वोत्तम बाणी है।

गुरु जी सिक्खों को बाणी-गायन द्वारा भाग्यशाली बनने हेतु प्रेरित करते हुए फरमान करते हैं कि जिन पर परमात्मा की कृपा की दृष्टि होती है यह सच्ची बाणी उनके हृदय में बस जाती है। सच्ची बाणी रूपी अमृत-जल को पीओ और उस परमात्मा की भक्ति-भावना में रत रहो और सारिगपाणी भाव घनुषधारी मालिक परमात्मा को स्मरण करो। गुरु जी फिर जोर देते हुए सिक्खों को प्रेरित करते हैं कि सच्ची बाणी को हृदय तथा मन-अंतर से गायन करो, इसी में आत्मिक कल्याण विद्यमान है।
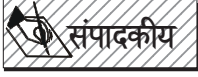
श्री गुरु ग्रंथ साहिब का सत्कार सिक्ख पंथ का अति अनिवार्य कर्त्तव्य

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रथम प्रकाश श्री हरिमंदर साहिब में सितंबर १६०४ ई. में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी महाराज की पावन अगुआई में किया गया। यह प्रकाश होने से श्री हरिमंदर साहिब की महिमा में और अधिक वृद्धि होना स्वाभाविक था। गुरु नानक नाम-लेवा सिक्ख संगत को एक ऐसा अद्वितीय धर्म-ग्रंथ प्राप्त हुआ जो विषय-वस्तु और संरचना की दृष्टि से अपना उदाहरण स्वयं ही है। सिक्ख पंथ का धर्म-ग्रंथ होने के साथ-साथ यह धर्म-ग्रंथ सारी मानवता का सर्वसांझा ग्रंथ भी है, चूंकि यही एक मात्र धर्म-ग्रंथ है जिसमें सारी मानवता के रूहानी और नैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कल्याण का उद्‌देश्य सामने रखा गया है। सर्वसांझा श्री हरिमंदर साहिब और सर्वसांझा धर्म-ग्रंथ--यह विश्व भर के धर्मों के इतिहास में केवल दस सिक्ख गुरु साहिबान द्वारा दर्शाया धर्म-मार्ग सिक्ख धर्म के ही हिस्से आया है। यह ज्ञात हो कि हमारी मंशा किसी अन्य धर्म को नीचा दर्शाना सर्वथा नहीं है बल्कि यह तथ्य पूर्णतः सत्य है जिसको विश्व भर के गहन विचारकों द्वारा मान्यता दी गई है।

यह भी एक अच्छी बात है कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब से अधिक से अधिक व्यवहारिक लाभ लेने हेतु विश्व स्तर पर एक नवचेतना दिखाई दे रही है। पावन बाणी को काफी पढ़ा, अध्ययन किया, सुना, समझा जा रहा है। सूझबूझ वाले लोग इस पावन बाणी पर अमल तथा व्यवहार करते हुए अपना लोक-परलोक संवार रहे हैं, परंतु जो देश सिक्ख गुरु साहिबान की जन्म-भूमि और अधिकतर कर्म-भूमि भी रहा वहां इस संदर्भ में स्थिति कुछ एक कमियों सहित पूर्णतः इच्छित रूप में दिखाई नहीं दे रही है।

अच्छी बात है कि अपने देश में श्री गुरु ग्रंथ साहिब के प्रति लोगों में गहरा विश्वास और श्रद्धा-भावना देखने में आ रही है। विश्वास और श्रद्धा तो मूलतः धर्म की बुनियाद होते हैं। विश्वास और श्रद्धा-भावना के बिना किसी भी धर्म का अस्तित्व नहीं हो सकता। इसके साथ ही जुड़ा एक अन्य पहलू भी विचारणीय है कि हमारे विश्वास, हमारी श्रद्धा-भावना किस प्रकार की है। क्या यह हमारे हृदय की गहराइयों से उत्पन्न हो रही है या यह दूसरे लोगों को दिखाने के लिए ही है? इस प्रश्न पर उचित विचार करना अनिवार्य है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब को जब श्री हरिमंदर साहिब में स्थापित किया गया, इसका पावन प्रकाश किया गया तो गुरु-घर के साथ चिरकाल से, मन-अंतर से जुड़े, बहुत व्यापक अनुभव तथा तजुर्बे के धारक बाबा बुड्‌ढा जी को इसके प्रथम ग्रंथी होने का सम्मान पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी महाराज द्वारा बख्शिश किया गया। बाबा जी ने पूर्णतः समर्पण के साथ बख्शिश की गई जिम्मेवारी को निभाकर आने वाले ग्रंथी साहिबान के लिए एक ऊंचा तथा निर्मल मॉडल प्रस्तुत किया। सिक्ख धर्म और इसके पावन धार्मिक स्थानों भाव गुरुद्वारा साहिबान के विकास-विगास से आज ग्रंथी सिंघों की एक पूरी श्रेणी दृश्यमान हो रही है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की मर्यादा को निभाने में इस श्रेणी का मुख्य हिस्सा है। इस मर्यादा को तनदेही से निभाने वाले सभी ग्रंथी सिंघ हमारे हार्दिक सत्कार के पात्र हैं और सिक्ख पंथ उनके सत्कार के प्रति सजग भी है। श्री

हरिमंदर साहिब की मर्यादा विलक्षण है। यह अत्यंत ऊंची एवं निर्मल मर्यादा है। यह बेहद शोभनीय है। यह मर्यादा देखने वाले के हृदय को विगास प्रदान करने वाली है।

अन्य बहुत-से गुरुद्वारा साहिबान में भी सिक्ख पंथ की प्रतिनिधि संस्था शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की देख-रेख में एक मर्यादा का पालन किया जा रहा है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की मर्यादा का सही रूप में पालन गुरुद्वारा साहिब में भी संभव है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने हमें श्री गुरु ग्रंथ साहिब के लड़ लगाया। अब श्री गुरु ग्रंथ साहिब ही सिक्ख पंथ के साकार गुरु हैं। ऐसी स्थिति में सिक्ख पंथ के लिए इस धर्म-ग्रंथ के प्रति सत्कार तथा श्रद्धा से प्रेरित मर्यादा का पालन और भी अधिक अनिवार्य हो गया है।

जो सिक्ख बंधु श्री गुरु ग्रंथ साहिब का अपने घरों में प्रकाश करते हैं उनकी श्रद्धा-भावना और उनके विश्वास का मूल्य डालना जरूरी है, परंतु स्थिति का दूसरा पक्ष भी देखने में आ रहा है जिसकी ओर ध्यान दिलाना भी आवश्यक है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब का घरों में प्रकाश तो कर दिया जाता है परंतु आज के बेहद व्यस्त युग में समय पर प्रकाश करने, मुखवाक या हुकमनामा लेने-सुनने, बाणी पढ़ने-सुनने और समय पर सुखासन करने आदि में कई प्रकार की ढीलें, अवज्ञायें आदि देखने-सुनने में आ रही हैं। घर में श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश करने वाले परिवार पर और विशेषत: उसके मुखिया पर बहुत बड़ी जिम्मेवारी आती है। उसको यह आत्म-विश्लेषण करना अत्यंत अनिवार्य है कि क्या घर में मर्यादा का पालन सही प्रकार से हो रहा है? क्या घर-परिवार श्री गुरु ग्रंथ साहिब के निर्मल उपदेशों के अनुसार जीवन-यापन करने का प्रयास कर रहा है?

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी को पढ़ने, सुनने और इस पावन बाणी के अध्ययन की उमंग होना बहुत ही अच्छी बात है। यदि किसी भाई-बहिन के हृदय में ऐसी उमंग है तो इसकी पूर्ति करने के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब को दो सैंचियों में सुविधा-उन्मुख आकार में प्रकाशित किया जा रहा है और ये सैंचियां शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रबंध वाले गुरुद्वारा साहिबान के साथ बनाये गये लिटरेचर स्टालों पर भेटा सहित प्राप्त की जा सकती हैं। वैसे इन संथा-सैंचियों का भी सत्कार रखना आवश्यक है, परंतु जो भाई-बहिन श्री गुरु ग्रंथ साहिब की उचित मर्यादा निभाने के लिए स्वयं को सक्षम नहीं पाते उनके लिए संथा-सैंचियां रखना और इनका उपयोग एक व्यवहारयोग्य और अच्छा उद्यम होगा। इसके साथ-साथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब का अर्थों सहित पाठ और अध्ययन भी आवश्यक है और इसके लिए भी आवश्यकतानुसार सामग्री आज हमारे लिए उपलब्ध है। हमें गुरबाणी के पावन गुटकों (पोथियों) से भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब की विभिन्न पावन बाणियां पढ़-सुन कर अपना आत्मिक कल्याण और चरित्र-निर्माण करने की दिशा में क्रियाशील होना चाहिए।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रथम स्थापना दिवस हमें श्री गुरु ग्रंथ साहिब तथा इसकी पावन बाणी का अधिक से अधिक श्रद्धा-भावना सहित सत्कार करने के लिए प्रयत्नशील होने के लिए प्रेरित करता है। श्री गुरु अरजन देव जी और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब अथवा इसकी पावन बाणी का हृदय की गहराइयों से सत्कार करने का जो आदर्श रूप प्रस्तुत किया था उसका अनुसरण करने का हर संभव प्रयास करना हरेक गुरु नानक नाम-लेवा सिक्ख भाई-बहिन का मूल कर्त्तव्य है।

भक्ति-मार्ग की मार्गदर्शक बाणी : सुखमनी साहिब

*-डॉ. मनमीत कौर**

भक्ति शब्द 'भज्' धातु से बना है। भज् का अर्थ 'सेवा करना' होता है। इस प्रकार से भक्ति या सेवा के द्वारा ईश्वर से तादात्म्य स्थापित करने का नाम ही भक्ति-मार्ग है। भक्ति को जीवन-मुक्ति का साधन तथा मार्ग माना गया है।

भक्ति-योग का मुख्य तात्पर्य है--अनन्यभाव। परमात्मा के अतिरिक्त किसी दूसरे का भाव मन में न लाना ही अनन्यभाव कहलाता है। इसका तात्पर्य यह है कि जिसका चित्त किसी भी वस्तु में न लगकर निरंतर अनन्य प्रेम से ईश्वर में लगा रहता है, वह ईश्वर के स्वरूप, नाम, गुण आदि का चिंतन और स्मरण करते हुए ईश्वर को प्राप्त कर लेता है।

अनन्यचित्त होने के साथ-साथ शरणागति की भावना भी भक्ति के लिए आवश्यक है। ईश्वर को ही सर्वस्व समझना तथा उसको अपना स्वामी, रक्षक, हितैषी समझ कर सब प्रकार से उस पर निर्भर हो जाना, समस्त कर्मों में ममता, अभिमान, कामना आदि को त्याग कर ईश्वर की सेवा, श्रद्धा आदि सभी शरणागति के अन्तर्गत आते हैं।

ईश्वर के स्वभाव का प्रेमपूर्ण स्मरण करना तथा ईश्वर का ध्यान करना भक्ति है। इस प्रकार से भक्ति-भाव मिश्रित ज्ञान है। ज्ञान ही भक्ति का आधार है। ज्ञान के फलस्वरूप भक्ति का उदय होता है अर्थात् भक्ति ज्ञान के फलस्वरूप विद्यमान होती है। जब साधक ईश्वर के स्वरूप के सम्बंध में निरंतर मनन, चिंतन एवं विचार करता है तब उसके मन में भक्ति का संचार होता है। इस प्रकार से भक्ति ज्ञान, प्रगाढ़ प्रेम एवं अविचल श्रद्धा के द्वारा निर्मित होती है। एक साधक को ईश्वर के गुणों का निरंतर स्मरण करते रहना आवश्यक माना गया है। एक मनुष्य के हृदय में प्रेम का उदय तभी होता है जब वह अपने प्रेम के विषय के गुणों के सम्बंध में जानकारी रखता हो। इस प्रकार से ज्ञान उपासक के मन में भक्ति के संचार के लिए परम आवश्यक है।

सामान्य रूप से भक्ति के नौ साधन माने गए हैं, जिन्हें नवधा भक्ति कहा जाता है। ये हैं--अर्चना, वंदना, दासता, सेवा, स्मरण, कीर्तन, श्रवण, सख्य भाव तथा आत्म-निवेदन। भक्त की रुचि वैभिन्नता के आधार पर भक्ति के विविध रूप दिखायी देते हैं :

- संतभाव--अर्थात् सर्वगुण सम्पन्न मानकर ईश्वर से बौद्धिक प्रेम करना।
- दास्यभाव--अर्थात् ईश्वर के प्रति सेवा-भाव या ईश्वर को स्वामी तथा स्वयं को दास मानना।

भक्ति-मार्ग का अधिकारी कौन हो सकता है? इस सम्बंध में यह कहा जा सकता है कि वही जो क्रोध, काम, लोभ, मोह आदि विकारों पर नियंत्रण रखता है; जो वाह्य व आंतरिक रूप से पवित्र हो। धैर्यवान, संतोषी व्यक्ति ही भक्ति-मार्ग का अनुसरण कर सकता है।

सरल, निष्कपट तथा शुद्ध हृदय वाला व्यक्ति ही भक्ति-मार्ग का अधिकारी हो सकता

**विभागाध्यक्ष, दर्शन शास्त्रविभाग, नवयुग कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजेंद्र नगर, लखनऊ-२२६००६*

है। ईश्वर से प्रेम तथा अनुराग के लिए श्रद्धा तथा निष्ठा आवश्यक है। इसके बिना भक्ति-मार्ग पर नहीं चला जा सकता। भक्त को शिशु के समान सरल स्वभाव का होना चाहिए जो कि विश्वास तथा आस्था द्वारा ही संभव है। संदेह तथा कपट से युक्त व्यक्ति भक्ति-मार्ग का अधिकारी नहीं हो सकता।

भक्ति के लिए नैतिक सद्गुणों से युक्त व्यक्ति ही योग्य माना जाता है। क्षमा, दया, मैत्री, विनय, त्याग तथा परोपकार में संलग्न व्यक्ति ही भक्ति-मार्ग पर चल सकता है।

किसी भी जाति, आयु या लिंग आदि के भेद का भक्ति-मार्ग के लिए कोई बंधन नहीं होता। गुरमति के अनुसार नैतिक गुणों से युक्त गृहस्थी भी भक्ति मार्ग का अनुसरण कर सकते हैं। वे सांसारिक कार्यों को करते हुए भी परमात्मा के साथ आंतरिक रूप से स्वयं को जोड़ सकते हैं।

सुखमनी साहिब का मार्ग भी भक्ति का है जिसमें नाम-सिमरन की प्रधानता है। इसके मूल में प्रवृत्ति-मार्ग है, संसार का त्याग नहीं है। संसार में विचरण करते हुए, सांसारिक पदार्थों का भोग करते हुए भी उससे विरक्त रहने का उपदेश है। गुरमति में गृहस्थ जीवन को मान्यता दी गयी है। गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए भी पदार्थों के मोह से वैराग्य है। इस प्रकार सुखमनी साहिब में प्रवृत्ति में निवृत्ति का अनोखा मिश्रण मिलता है :

अनदिनु कीरतनु केवल बख्यानु ॥
ग्रिहसत महि सोई निरबानु ॥ (पन्ना २८१)

नाम-सिमरन को विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग तरह से परिभाषित किया है। सामान्य रूप से किसी वस्तु, स्थान या व्यक्ति को हम जिस संज्ञा से पुकारते हैं उसको 'नाम' कहा जाता है। किसी वस्तु के अस्तित्व को बताने के लिए उसके गुणों के अनुसार नाम दिया जाता है।

डॉ. सुरिंदर सिंघ (कोहली) के अनुसार, 'नाम' को बीज-मंत्र, गुरु का शबद या परमात्मा का नाम कहा जा सकता है।[१]

प्रो. राम सिंघ का विचार है कि 'नाम' का अभ्यास एक तरफ तो साधक का सुधार कर देता है तथा दूसरी ओर अहंकार व विकारों को मनुष्य के अंतर से निकालता है, वहीं तीसरी ओर निरंकार के नये-नये गुणों का अनुभव करवाता है।[२]

सुखमनी साहिब में भक्ति-मार्ग को सर्वोच्च माना गया है। भक्ति के समस्त अंगों का सुखमनी साहिब में विस्तृत वर्णन है। 'दास-भावना' अर्थात् दास-भावना के साथ प्रभु की आराधना को उत्तम स्थान दिया गया है:

आतम रामु तिसु नदरी आइआ ॥
दास दसंतण भाइ तिनि पाइआ ॥
सदा निकटि निकटि हरि जानु ॥ (पन्ना २७५)

'सेवा' अर्थात् साध, संत आदि की सेवा तथा विशेष रूप से चरणों की सेवा को भी सुखमनी साहिब में स्थान दिया गया है, क्योंकि इसके द्वारा भक्त का जीवन पवित्र तथा निर्मल होता है:

चरन साध के धोइ धोइ पीउ ॥
अरपि साध कउ अपना जीउ ॥ (पन्ना २८३)

सेवा को भक्ति का मूल स्रोत कहा गया है। सेवा के बिना भक्ति नहीं हो सकती। सुखमनी साहिब के अनुसार सेवा का अवसर भी उसको ही प्राप्त होता है जिस पर ईश्वर की कृपा होती है :

उन की सेवा सोई लागै ॥
जिस नो क्रिपा करहि बडभागै ॥ (पन्ना २८२)

सेवा को उत्तम भाग्य की निशानी बताया गया है:

साध सेवा वडभागी पाईऐ ॥ (पन्ना २८३)

ईश्वर की सेवा के लिए उसके प्रति समर्पण की भावना का होना अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा साधक ही ईश्वर को प्राप्त कर पाता है:

भगवंत की टहल करै नित नीति ॥
मनु तनु अरपै बिसन परीति ॥
हरि के चरन हिरदै बसावै ॥
नानक ऐसा भगउती भगवंत कउ पावै ॥
(पन्ना २७४)

सेवा, भक्ति के द्वारा ही समस्त पदार्थों की प्राप्ति होती है। सुखमनी साहिब में सेवा को परम पद की प्राप्ति का एक मुख्य साधन माना गया है:

सेवक कउ सेवा बनि आई ॥
हुकमु बूझि परम पदु पाई ॥ (पन्ना २९२)

ईश्वर की भक्ति में लीन व्यक्ति के लिए निष्काम सेवा को श्रेष्ठ माना गया है, क्योंकि इसके द्वारा ही सेवक सेवा करता हुआ ईश्वर को प्राप्त कर लेता है :

सेवा करत होइ निहकामी ॥
तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ (पन्ना २८६)

'श्रवण' अर्थात् प्रभु का यश सुनने की प्रेरणा भी सुखमनी साहिब में दी गयी है :

कर हरि करम स्रवनि हरि कथा ॥
हरि दरगह नानक ऊजल मथा ॥ (पन्ना २८१)

'कीर्तन' अर्थात् प्रभु के गुणों का रागों तथा संगीत सहित गायन करने का उपदेश भी सुखमनी साहिब में अनेक बार हुआ है :

बडभागी ते जन जग माहि ॥
सदा सदा हरि के गुन गाहि ॥
राम नाम जो करहि बीचार ॥
से धनवंत गनी संसार ॥ (पन्ना २८१)

जो तन व मन से प्रभु की भक्ति में लीन रहता है तथा स्वयं के साथ-साथ दूसरों को भी इसकी प्रेरणा देता है, वह उत्तम पदवी को प्राप्त कर लेता है :

काहू फल की इछा नही बाछै ॥
केवल भगति कीरतन संगि राचै ॥ . . .
आपि द्रिड़ै अवरह नामु जपावै ॥
नानक ओहु बैसनो परम गति पावै ॥ (पन्ना २७४)

जो मनुष्य परमात्मा के गुणों का गायन करता है, वह ईश्वर की कृपा का पात्र बनता है तथा उत्तम फल की प्राप्ति करता है :

गुन गोबिद कीरतनु जनु गावै ॥
गुर प्रसादि नानक फलु पावै ॥ (पन्ना २८५)

अपने जीवन को विकारों से दूर रखने के साधन के रूप में कीर्तन को सुखमनी साहिब में विशेष साधन माना गया है :

अंम्रित बचन हरि के गुन गाउ ॥
प्रान तरन का इहै सुआउ ॥ (पन्ना २९३)

'सिमरन' अर्थात् ईश्वर को हर श्वास याद करना। सुखमनी साहिब का केंद्रीय विषय ही नाम-सिमरन है। इसी से व्यक्ति के समस्त दुखों का नाश होता है। सुखमनी साहिब का आरंभ ही सिमरन से हुआ है :

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥ (पन्ना २६२)

प्रभु के सिमरन से जीव कई विकारों से बच जाते हैं :

प्रभ का सिमरनु सभ ते ऊचा ॥
प्रभ कै सिमरनि उधरे मूचा ॥ (पन्ना २६३)

सुखमनी साहिब की पहली असटपदी सिमरन की महिमा का विस्तृत विश्लेषण करती है। ईश्वर का सिमरन करने से जीव भव-चक्र से पार हो जाता है, विकारों से दूर हो जाता है, माया-मोह में नहीं पड़ता, दूसरों की भलाई में अपना जीवन व्यतीत करता है, उसका मन स्थिर हो जाता है :

प्रभ कै सिमरनि गरभि न बसै ॥
प्रभ कै सिमरनि दूखु जमु नसै ॥
प्रभ कै सिमरनि कालु परहरै ॥
प्रभ कै सिमरनि दुसमनु टरै ॥ (पन्ना २६२)

सुखमनी साहिब में सिमरन-भक्ति को अनन्त शक्ति-सम्पन्न माना गया है। इसी के द्वारा धार्मिक ग्रंथों की रचना हुई। सिमरन में ईश्वर स्वयं बसता है :

हरि सिमरनु करि भगत प्रगटाए ॥
हरि सिमरनि लगि बेद उपाए ॥
हरि सिमरनि भए सिध जती दाते ॥
हरि सिमरनि नीच चहु कुंट जाते ॥ (पन्ना २६३)

नाम-सिमरन के महत्व का सुखमनी साहिब में विस्तृत वर्णन है। इसके द्वारा मनुष्य के दुखों का नाश होता है तथा उसे भव-चक्र से मुक्ति मिलती है:

जनम मरन ता का दूखु निवारै ॥
दुलभ देह ततकाल उधारै ॥ (पन्ना २९६)

प्रभु के नाम-सिमरन को 'पारिजात' या 'कल्पवृक्ष' कहा गया है जो समस्त मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला माना जाता है अर्थात् सिमरन से व्यक्ति में अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति करने की सामर्थ्य आ जाती है। ईश्वर का सिमरन समस्त मनोरथों को पूर्ण करने वाली 'कामधेनु' के समान है। इससे स्पष्ट है कि मनुष्य में ऐसी शक्ति प्राप्त करने की संभावनाएं प्रभु के नाम-सिमरन द्वारा ही प्राप्त होती हैं:

पारजातु इहु हरि को नाम ॥
कामधेन हरि हरि गुण गाम ॥ (पन्ना २६५)

जिस प्रकार से बीज को उगने के लिए अनुकूल वातावरण की आवश्यकता होती है अर्थात् वह योग्य भूमि पर ही उगता है, उसी प्रकार से प्रभु के नाम-सिमरन के लिए भी अनुकूल शख्सियत के रूप में गुरमुख व्यक्ति को स्वीकार किया गया है :

नाम तुलि कछु अवरु न होइ ॥
नानक गुरमुखि नामु पावै जनु कोइ ॥
(पन्ना २६५)

मन की एकाग्रता तथा सच्चे प्रेम के बिना वास्तव में 'सिमरन' नहीं हो सकता। सिमरन का उद्देश्य ही है कि मनुष्य का चित्त शांत हो तथा सांसारिक कार्यों को करते हुए भी वह आंतरिक रूप से परमात्मा से जुड़ जाए। इसके द्वारा व्यक्ति में समानता का भाव जागृत होता है क्योंकि ईश्वर सब में दृष्टिगोचर होता है। सुखमनी साहिब में स्थान-स्थान पर प्रभु के नाम-सिमरन की महानता को दर्शाया गया है। जहां विपरीत परिस्थितियों में माता, पिता, पुत्र आदि कोई भी सहायक नहीं होता वहां प्रभु-नाम का सिमरन ही व्यक्ति के समस्त दुखों का नाश करता है :

जह मात पिता सुत मीत न भाई ॥
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई ॥ . . .
जह मुसकल होवै अति भारी ॥
हरि को नामु खिन माहि उधारी ॥ (पन्ना २६४)

मानव-जीवन का एक पक्ष यह भी है कि यह जब तक जीवित रहता है तब तक भय-मुक्त होना इसके लिए असंभव प्रतीत होता है। सामाजिक, शारीरिक आदि विभिन्न कारणों से यह दुखी रहता है तथा शांत व संतुलित जीवन-यापन नहीं कर पाता। इन समस्त परेशानियों का हल सुखमनी साहिब के अनुसार प्रभु का नाम-सिमरन है जो समस्त दुखों-कलेशों का अंत करने में सक्षम है, क्योंकि ईश्वर का सिमरन ही ऐसी अवस्था ला सकता है और मनुष्य सुख तथा दुख में समभाव से आचरण करना सीख जाता है।

'वंदना' अर्थात् श्रद्धापूर्वक ईश्वर के चरणों को अपने हृदय में याद करने वाले भक्तों की चर्चा सुखमनी साहिब में है :

अनिक भगत बंदन नित करहि ॥
चरन कमल हिरदै सिमरहि ॥ (पन्ना २८७)

यह माना गया है कि ईश्वर का सच्चा उपासक वही है जिसके हृदय में ईश्वर की भक्ति

का प्रेम है तथा जो सभी बुरे काम करने वालों की संगत से दूर रहता है। उसके मन से हर तरह का भ्रम मिट जाता है तथा वह हर जगह पर ईश्वर को मौजूद जानकर उसकी पूजा करता है:

मन ते बिनसै सगला भरमु ॥
करि पूजै सगल पारब्रहमु ॥ (पन्ना २७४)

सुखमनी साहिब में प्रेम-भक्ति को भक्ति-मार्ग की बुनियाद के रूप में वर्णित किया गया है। पहले मन में ईश्वर के प्रति प्रेम का भाव उत्पन्न हो तभी ईश्वर के प्रति भक्ति हो सकती है:

उपजी प्रीति प्रेम रसु चाउ ॥
मन तन अंतरि इही सुआउ ॥ (पन्ना २९०)

सुखमनी साहिब में भक्ति के साधनों की चर्चा भी की गयी है। अरदास को भक्ति का एक प्रमुख साधन माना गया है। अरदास द्वारा ईश्वर को माता, पिता, स्वामी आदि का रूप बनाकर आत्म-समर्पण का भाव जागृत होता है:

तू ठाकुरु तुम पहि अरदासि ॥
जीउ पिंडु सभु तेरी रासि ॥
तुम मात पिता हम बारिक तेरे ॥
तुमरी क्रिपा महि सूख घनेरे ॥ (पन्ना २६८)

भक्ति में मन को लगाने के लिए अरदास या प्रार्थना अनिवार्य है। ईश्वर की शरण में आकर अरदास करने से ही भक्ति की प्राप्ति संभव है:

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ ॥
(पन्ना २८९)

अरदास द्वारा अहंकार की निवृत्ति होती है तथा मन में विनम्रता आती है। दीन-भावना के साथ अरदास करने से प्रभु की कृपा प्राप्त होती है तथा मनुष्य संसार-सागर से पार हो जाता है:

करतार करुणा मै दीनु बेनती करै ॥
नानक तुमरी किरपा तरै ॥ (पन्ना २६७)

साधसंगत के द्वारा भी भक्ति की प्राप्ति होती है। संगत से तात्पर्य होता है मेल-मिलाप और साधसंगत से तात्पर्य है-श्रेष्ठ व्यक्तियों का मेल-मिलाप। सुखमनी साहिब की सातवीं असटपदी में साधसंगत की विशेष महिमा बतायी गयी है। जैसे बीयाबान जंगल के भटके हुए को मार्ग मिल जाता है उसी प्रकार से साधसंगत के द्वारा आत्मिक प्रकाश होता है:

जिउ महा उदिआन महि मारगु पावै ॥
तिउ साधू संगि मिलि जोति प्रगटावै ॥
(पन्ना २८२)

साधसंगत के द्वारा मनुष्य प्रभु का साक्षात करता है तथा साधसंगत में प्रभु का सिमरन करने से मनुष्य जन्म-मृत्यु से रहित हो जाता है और अमर पदवी को प्राप्त कर लेता है:

अमर भए अमरा पदु पाइआ ॥
साधसंगि नानक हरि धिआइआ ॥ (पन्ना २९३)

साध की संगत से अहंकार समाप्त होता है तथा उत्तम ज्ञान प्रकट होता है अर्थात् बुद्धि निर्मल हो जाती है:

साध कै संगि मिटै अभिमानु ॥
साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु ॥ (पन्ना २७१)

पांचों विकार वश में आ जाते हैं, किसी से भी वैर की भावना नहीं रह जाती क्योंकि प्रत्येक में उसे प्रभु का रूप ही दिखायी देता है। इस प्रकार से आध्यात्मिक उच्चता की प्राप्ति होती है:

साधसंगि किस सिउ नही बैरु ॥
साध कै संगि न बीगा पैरु ॥
साध कै संगि नाही को मंदा ॥
साधसंगि जाने परमानंदा ॥ (पन्ना २७१)

प्रो. प्यारा सिंघ पदम के अनुसार, "श्रेष्ठ धर्म की पाठशाला साधसंगत है। अहंकार को त्याग कर प्रभु का सिमरन किया जाए तो आत्मा शुद्ध होती है तथा आत्मा की शुद्धि से

ही सच्चे धर्म का ज्ञान होता है, सतिगुरु से और साध-संगति से।"[३]

प्रभु-भक्ति के लिए एक ढंग जिह्वा द्वारा सिमरन करना बताया गया है। इसके लिए किसी विशेष समय, स्थान या स्थिति की आवश्यकता नहीं होती बल्कि साधक जब जिस स्थिति में तथा जिस भी स्थान पर हो, वह आठों पहर सिमरन कर सकता है:

--आल जंजाल बिकार ते रहते ॥
राम नाम सुनि रसना कहते ॥ (पन्ना २९५)
--जिनि तेरी मन बनत बनाई ॥
ऊठत बैठत सद तिसहि धिआई ॥ (पन्ना २७०)

श्वास-श्वास प्रभु-सिमरन को भी भक्ति का एक साधन माना गया है। जिह्वा या रसना द्वारा सिमरन बहिर्मुखी होता है जबकि श्वास-श्वास सिमरन अन्तर्मुखी होता है अर्थात् तब इसकी गति श्वासों के साथ जुड़ जाती है। श्वास क्रिया की गति के अनुसार भक्ति करने वालों को सुखमनी साहिब में 'परमात्मा का प्यारा' कहा गया है और इस प्रकार की भक्ति की प्रेरणा सुखमनी साहिब में बार-बार दी गई है:

--प्रभ की उसतति करहु दिनु राति ॥
तिसहि धिआवहु सासि गिरासि ॥ (पन्ना २८०)
--जिह प्रसादि तुझु को न पहूचै ॥
मन सासि सासि सिमरहु प्रभ ऊचे ॥ (पन्ना २७०)

डॉ. सुरिंदर सिंघ (कोहली) ने भी नाम-सिमरन के दो साधन माने हैं--रसना द्वारा तथा श्वास-श्वास।[४]

लिव--जाप को भी भक्ति का साधन माना गया है। इसका तात्पर्य है--एकाकारता या लीनता। इसमें मन की एकाग्रता होती है तथा जीवात्मा परमात्मा में लीन हो जाती है। यह सिमरन की सर्वश्रेष्ठ अवस्था है। इस अवस्था में चित्त-वृत्तियों का पूर्ण रूप से दमन हो जाता है। सुखमनी साहिब के अनुसार जो व्यक्ति ईश्वर की शरण में अपना सब कुछ समर्पित कर देते हैं उनके अन्त:करण में ज्ञान का प्रकाश होता है:

परे सरनि आन सभ तिआगि ॥
अंतरि प्रगास अनदिनु लिव लागि ॥ (पन्ना २८९)

जो मनुष्य इस अवस्था को प्राप्त कर लेता है उसे ईश्वर का ज्ञान हो जाता है तथा दुख, दर्द व भय मन से दूर हो जाता है:

मनि तनि नामु जपहु लिव लाइ ॥
दूखु दरदु मन ते भउ जाइ ॥ (पन्ना २९३)

सुखमनी साहिब में यह भी उल्लेख है कि जिस प्रकार से जीव को प्रत्येक क्षेत्र में एक मार्गदर्शक की आवश्यकता होती है उसी प्रकार से आध्यात्मिक विकास के लिए भी गुरु की अत्यन्त आवश्यकता होती है। इसके बिना साधना सम्पन्न नहीं हो सकती। सुखमनी साहिब में परमात्मा को 'आदि गुरु' कहा गया है। आरंभ में ही उस 'आदि गुरु' को नमस्कार किया गया है:

आदि गुरए नमह ॥ जुगादि गुरए नमह ॥
सतिगुरए नमह ॥ स्री गुरदेवए नमह ॥
(पन्ना २६२)

गुरु सांसारिकता में लीन जीव को परमात्मा से एक होने की राह दिखाता है। सुखमनी साहिब में 'गुरु' के महत्व तथा आवश्यकता को स्वीकार करते हुए 'गुरु' को व्यक्ति के जीवन का आधार माना गया है। 'गुरु' ही ज्ञान-रूपी उजाले से अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करता है एवं मन में ज्ञान का प्रकाश करता है:

गिआन अंजनु गुरि दीआ
अगिआन अंधेर बिनासु ॥
हरि किरपा ते संत भेटिआ
नानक मनि परगासु ॥ (पन्ना २९३)

जो सेवक अपने 'गुरु' के साथ रहकर उसकी आज्ञा के अनुसार जीवन व्यतीत करता

है, उसके बताए मार्ग पर चलता है, हृदय से प्रभु का नाम-सिमरन करता है, 'गुरु' की सेवा निष्काम भावना से करता है, उसके समस्त कार्य पूर्ण हो जाते हैं तथा उसे परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है:

मनु बेचै सतिगुर कै पासि ॥
तिसु सेवक के कारज रासि ॥
सेवा करत होइ निहकामी ॥
तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ (पन्ना २८६)

'गुरु' की आवश्यकता तथा महत्व को ध्यान में रखते हुए यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि ऐसे 'गुरु' की पहचान कैसे की जाए तथा ऐसा 'गुरु' कैसे व कहां प्राप्त हो सकता है? सुखमनी साहिब में इसका समाधान दिया गया है कि वास्तविक गुरु 'वह' है जिसके हृदय में आठों पहर प्रभु का नाम है और वह समस्त सुख व जीवन देने वाला है:

सो सतिगुरु जिसु रिदै हरि नाउ ॥
अनिक बार गुर कउ बलि जाउ ॥
सरब निधान जीअ का दाता ॥
आठ पहर पारब्रहम रंगि राता ॥ (पन्ना २८७)

वह ऐसा पूर्ण पुरुष है जिसके कथन व उपदेश सदा रहने वाले हैं। वह जिसकी ओर भी दया-दृष्टि से देखता है वह व्यक्ति 'संत' हो जाता है अर्थात् उसका जीवन उत्तम तथा शुद्ध हो जाता है:

पूरा गुरु अख्यओ जा का मंत्र ॥
अंम्रित द्रिसटि पेखै होइ संत ॥ (पन्ना २८७)

इस प्रकार से सुखमनी साहिब की सम्पूर्ण बाणी का मूल विषय ही 'नाम-सिमरन' है। इसी को भक्ति, मुक्ति, सुख तथा आनंद-प्राप्ति का साधन माना गया है:

हरि का नामु जन कउ मुकति जुगति ॥
हरि कै नामि जन कउ त्रिपति भुगति ॥
(पन्ना २६४)

सुखमनी साहिब में आदि से अंत तक प्रभु-नाम की श्रेष्ठता, व्यापकता तथा सर्वोच्चता दर्शायी गयी है:

बहु सासत्र बहु सिम्रिती पेखे सरब ढढोलि ॥
पूजसि नाही हरि हरे नानक नाम अमोल ॥
(पन्ना २६५)

समस्त धर्मों में श्रेष्ठ धर्म भी प्रभु-भक्ति को ही माना गया है:

सरब धरम महि स्रेसट धरमु ॥
हरि को नामु जपि निरमल करमु ॥
(पन्ना २६६)

भक्ति को मुक्ति का साधन माना गया है। इसके द्वारा सहजावस्था, ब्रह्म-ज्ञान व शाश्वत आनंद की प्राप्ति होती है:

ऐसा नामु मन सदा धिआईऐ ॥
नानक गुरमुखि परम गति पाईऐ ॥ (पन्ना २६४)

प्राचीन भारतीय साधना-पद्धति में तीन मार्गों का उल्लेख प्राप्त होता है--ज्ञान-मार्ग, कर्म-मार्ग तथा भक्ति-मार्ग। मानव बौद्धिकता के विकास के फलस्वरूप जीव के दुखों का कारण अज्ञानता या अविद्या माना गया है। इन दुखों से छुटकारा पाने के लिए ज्ञान की प्राप्ति अति आवश्यक मानी गयी है। सुखमनी साहिब में भी ज्ञान को उच्च स्थान प्राप्त है क्योंकि मन अज्ञानता के कारण विचलित होता है। ज्ञान के द्वारा ही इसे वश में किया जा सकता है। ज्ञान के द्वारा ही काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि विकारों का दमन संभव है। तप, योग, समाधि व ध्यान की अपेक्षा ज्ञान को श्रेष्ठ माना गया है:

बिदिआ तपु जोगु प्रभ धिआनु ॥
गिआनु स्रेसट ऊतम इसनानु ॥ (पन्ना २९६)

१. आंतरिक ज्ञान- यह तत्व-ज्ञान, ब्रह्म-ज्ञान तथा सहज-ज्ञान है :

अंतरि होइ गिआन परगासु ॥
उसु असथान का नही बिनासु ॥ (पन्ना २७८)

आंतरिक ज्ञान द्वारा मुक्ति, शांति, सुख, सिद्धि आदि की प्राप्ति होती है:

खेम सांति रिधि नव निधि ॥
बुधि गिआनु सरब तह सिधि ॥ (पन्ना २९५)

२. वाह्य ज्ञान– यह सांसारिक पदार्थों का ज्ञान है। यह ज्ञान लोभ का कारण है :

बाहरि गिआन धिआन इसनान ॥
अंतरि बिआपै लोभु सुआनु ॥ (पन्ना २६७)

सुखमनी साहिब में योग-अभ्यास का प्रबलता से खंडन किया गया है। यदि कोई व्यक्ति अपने सभी कार्यों को छोड़कर जंगलों में घूमता रहे, धर्म के विभिन्न कर्मकांड करता रहे, दान-पुण्य करे, अपने शरीर को कष्ट देकर व्रतों का आचरण करे तो भी उसको शांति की प्राप्ति नहीं हो सकती :

जोग अभिआस करम ध्रम किरिआ ॥
सगल तिआगि बन मधे फिरिआ ॥
अनिक प्रकार कीए बहु जतना ॥
पुंन दान होमे बहु रतना ॥
सरीरु कटाइ होमै करि राती ॥
वरत नेम करै बहु भाती ॥ (पन्ना २६५)

जैन धर्म के साधना के कठिन मार्गों का सुखमनी साहिब में खंडन किया गया है:

निउली करम करै बहु आसन ॥
जैन मारग संजम अति साधन ॥ (पन्ना २६५)

तीर्थों पर जाकर स्नान किया जाए या फिर शरीर त्यागा जाए, इससे न तो मन की मैल जाती है तथा न ही मन माया के प्रभाव से मुक्त ही हो पाता है। समस्त प्रकार के दुखों का निवारण प्रभु-नाम के सिमरन से ही संभव है:

मन कामना तीरथ देह छुटै ॥
गरबु गुमानु न मन ते हुटै ॥
सोच करै दिनसु अरु राति ॥
मन की मैलु न तन ते जाति ॥
इसु देही कउ बहु साधना करै ॥
मन ते कबहू न बिखिआ टरै ॥
जलि धोवै बहु देह अनीति ॥
सुध कहा होइ काची भीति ॥
मन हरि के नाम की महिमा ऊच ॥
नानक नामि उधरे पतित बहु मूच ॥ (पन्ना २६५)

भारतीय परंपरा में कर्म-मार्ग को भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इन कर्मों को ही आवागमन का मूल कारण माना गया है। मनुष्य भव-चक्र में कर्मों के बंधन के कारण ही पड़ता है। कर्म दो प्रकार के होते हैं:

१. सकाम कर्म– ये वो कर्म होते हैं जिन्हें फल की इच्छा के कारण किया गया है। इन कर्मों के संस्कार अन्त:करण से जुड़े रहते हैं, अत: समय-समय पर वासनाओं सहित प्रबल हो जाते हैं। इन्हीं संस्कारों के अधीन ही मनुष्य भव-चक्र में पड़ा रहता है। मध्य युग में यज्ञ, पूजा, पाठ, तीर्थ-गमन, तप, मूर्ति-पूजा आदि कर्म सांसारिक पदार्थों की प्राप्ति या मुक्ति को ध्यान में रख कर किए जाते थे। गुरमति में ऐसे कर्म-कांडों को अहंकार का कारण माना गया है और इनका स्पष्ट शब्दों में खंडन किया गया है। ऐसे कर्मों को करना व्यर्थ माना गया है:

कोटि करम करै हउ धारे ॥
स्रमु पावै सगले बिरथारे ॥
अनिक तपसिआ करे अहंकार ॥
नरक सुरग फिरि फिरि अवतार ॥ (पन्ना २७८)

२. निष्काम कर्म– ये वो कर्म हैं जो चित्त की शुद्धि के लिए तथा फल की इच्छा त्याग कर किए जाते हैं। ऐसे कर्मों को आध्यात्मिक कर्म भी कहा जाता है। सुखमनी साहिब में भी निष्काम कर्म को मान्यता दी गयी है। फल की इच्छा का पूर्ण रूप से त्याग करके कर्म करने की प्रेरणा सुखमनी साहिब में बार-बार दी गयी है:

करम करत होवै निहकरम ॥
तिसु बैसनो का निरमल धरम ॥ (पन्ना २७४)

कर्म तथा फल दोनों को ईश्वर को समर्पित करते हुए जीवन व्यतीत करने से अधिक आनंद की प्राप्ति होती है :

जिस की बसतु तिसु आगै राखै ॥
प्रभ की आगिआ मानै माथै ॥
उस ते चउगुन करै निहालु ॥
नानक साहिबु सदा दइआलु ॥ (पन्ना २६८)

सुखमनी साहिब में ऐसे शुभ कर्मों को करने की प्रेरणा दी गयी है जिनके द्वारा मन की मैल दूर हो जाती है:

सगल क्रिआ महि ऊतम किरिआ ॥
साधसंगि दुरमति मलु हिरिआ ॥
सगल उदम महि उदमु भला ॥
हरि का नामु जपहु जीअ सदा ॥ (पन्ना २६६)

अशुभ कर्मों को सुखमनी साहिब में पशुओं के आचरण के समान माना गया है। ये कर्म वाह्य तथा दिखावटी होते हैं और माया, मोह व अहंकार आदि के अधीन होकर किए जाते हैं। इन कर्मों के मूल में छिपी दुर्भावनाओं के कारण ही ये कर्म अशुभ कहलाते हैं :

करतूति पसू की मानस जाति ॥
लोक पचारा करै दिनु राति ॥
बाहरि भेख अंतरि मलु माइआ ॥
छपसि नाहि कछु करै छपाइआ ॥
बाहरि गिआन धिआन इसनान ॥
अंतरि बिआपै लोभु सुआनु ॥ (पन्ना २६७)

इस प्रकार से ज्ञान-मार्ग, कर्म-मार्ग तथा भक्ति-मार्ग में से सुखमनी साहिब के अनुसार भक्ति-मार्ग सर्वश्रेष्ठ मार्ग है। यह अवश्य है कि ज्ञान तथा कर्म के द्वारा भक्ति-मार्ग में सहायता प्राप्त होती है, क्योंकि जब तक किसी विषय का ज्ञान नहीं होता तब तक व्यक्ति उसके अनुसार आचरण भी नहीं कर सकता। सांसारिक विषयों की वास्तविकता का ज्ञान होने पर ही परमात्मा के प्रति भक्ति संभव है।

श्री रामानुज ने भी मुक्ति के साधन के रूप में 'भक्ति सहित ज्ञान' को स्वीकार किया। उनके अनुसार भक्ति ज्ञान से भिन्न नहीं, भक्ति ईश्वर के प्रति प्रेम है। ईश्वर के प्रति प्रेम तभी हो सकता है जब उसके अतिरिक्त किसी अन्य विषय में प्रेम न हो। इसे नि:स्वार्थ प्रेम या भक्ति कहते हैं। इस भक्ति को प्राप्त करने के लिए चित्त-शुद्धि की आवश्यकता होती है। चित्त शुद्ध तभी हो सकता है जब सांसारिक विषयों के प्रति अनास्था होती है और केवल ईश्वर में ही आस्था होती है। यह ज्ञान की पराकाष्ठा है। चित्त के शुद्ध होने पर ही संसार के प्रति विकर्षण तथा ईश्वर के प्रति आकर्षण संभव है।

भक्ति से विमुख व्यक्तियों को सुखमनी साहिब में निम्न स्थान दिया गया है तथा मनमुख कहा गया है। ऐसे व्यक्तियों को इस जगत में सुख की प्राप्ति नहीं होती है क्योंकि वे इच्छाओं के कारण कभी भी संतुष्ट नहीं हो पाते। डॉ. महिंदर कौर (गिल) के अनुसार नाम विमुख जीव सांप, कुत्ते जैसे जानवरों के समान हैं। नाम के बिना समस्त कर्म निष्फल हैं। नाम से विमुख जीव हमेशा बुरे कर्म करते हैं। ऐसे व्यक्तियों को इस लोक तथा परलोक कहीं पर भी स्थान नहीं मिल पाता।[५]

भक्ति-मार्ग भावनाओं को सघन बनाकर ईश्वर को पा लेने का मार्ग है। भावनाओं में ऐसी शक्ति होती है जो मनुष्य में निहित शक्तियों को जागरूक कर सक्रिय कर देती है। अत: तार्किक रूप से यह संभावना तो स्पष्ट हो जाती है कि इन्हें प्रबल रूप में सक्रिय बनाने से ईश्वर की प्राप्ति भी संभव है। साधारण भावनाओं को प्रबल संवेगात्मक अनुभूतियों में परिणत किया जा सकता है, अत: साधारण प्रेम के भाव को परम भक्ति परिणत किया जा सकता

है, ईश्वरीय प्रेम में परिणत किया जा सकता है। यही भक्ति-मार्ग का वैचारिक आधार है। प्रेम या भक्ति मानव-स्वभाव के सहज अंश हैं। अंतर यही है कि प्रेम के सामान्य उदाहरणों में प्रेम का विषय सीमित वस्तुएं होती हैं, जिनमें स्थापित्व नहीं होता है, जो अन्ततः सत् भी नहीं है। इस प्रकार का प्रेम वस्तुतः शुद्ध प्रेम न होकर आकर्षण है, आसक्ति है। भक्ति-मार्ग शुद्ध प्रेम का मार्ग है, जिसमें जिससे प्रेम है वह कोई सीमित वस्तु नहीं है, बल्कि स्वयं परमेश्वर है। इस प्रकार के प्रेम में सर्वप्रेम निहित है, हर वस्तु तथा हर तत्व के लिए प्रेम निहित है, क्योंकि यह सब कुछ का एकमात्र आधार ईश्वर के प्रति प्रेम है। भक्ति-मार्ग मात्र भक्ति को ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग है। ईश्वर भक्ति स्तर सामान्य पूजा, प्रार्थना, आराधना आदि का स्तर है। यह भक्ति-मार्ग का सरलतम स्तर है, क्योंकि यह सभी व्यक्तियों के लिए सुलभ है। इसके बाद के स्तर में पूजा का रूप अधिक व्यापक हो जाता है। इस स्तर में ईश्वर-प्रार्थना, ईश्वर का नाम लेना, ईश्वरीय गुणों का कीर्तन, ईश्वर सम्बंधी श्लोकों का भावनापूर्ण उच्चारण आदि जीवन के अंश बन जाते हैं। तीसरे स्तर में इस प्रकार की प्रार्थना के स्थान पर शांत-आंतरिक प्रार्थना का आविर्भाव हो जाता है। भक्त जब इस स्तर पर पहुंच जाता है तब उसके लिए ईश्वर के अतिरिक्त और कुछ नहीं रह जाता। उसकी समस्त भावनात्मक शक्ति ईश्वरीय अनुभूति से परिपूर्ण हो जाती है। इसके पश्चात अंतिम स्तर पर भक्त और ईश्वर का अंतर भी समाप्त हो जाता है। भक्त ईश्वर में लीन हो जाता है। यह एक विशिष्ट आंतरिक अनुभूति है, जहां भक्त सांसारिकता से सर्वथा ऊपर उठ जाता है तथा ईश्वर में लीन होकर आत्म की परिणति पा लेता है। भक्ति-मार्ग का चरम लक्ष्य यही है। भक्ति-मार्ग सर्वसुलभ व सर्वप्रचलित मार्ग है। यह मानव-स्वभाव के सहज रूप के अनुरूप है। इसकी सहजता एवं सरलता का एक स्पष्ट कारण यह भी है कि इसके लिए किसी विशेष प्रकार की क्षमता की आवश्यकता नहीं होती और न इसके लिए किसी उपकरण की अनिवार्यता पर जोर दिया गया है। मानव के जीवन में भावना तथा संवेग का प्रमुख स्थान है, उसके इसी स्वाभाविक कृति पर आधृत भक्ति-मार्ग स्पष्टः सरलतम प्रतीत होता है।

डॉ. सुरजीत सिंघ ने सुखमनी साहिब में नाम-सिमरन की व्याख्या से यह निष्कर्ष निकाला है कि "नाम से तात्पर्य अकाल पुरख का सृष्टि का आधार सर्वव्यापक शक्ति है। इस शक्ति को सिमरन के द्वारा ही अपने अंदर अनुभव किया जा सकता है। सिमरन का भाव है हर समय याद रखना। नाम-सिमरन द्वारा सहज अवस्था प्राप्त होती है। साध, संत, ब्रह्मज्ञानी सब नाम-सिमरन का ही परिणाम हैं। सिमरन के लिए सन्यास की कोई आवश्यकता नहीं है, गृहस्थ के सब सुख भोगते हुए भी नाम-सिमरन हो सकता है, लेकिन इस सारे कार्य के लिए उस प्रभु की कृपा अत्यंत आवश्यक है।"[६]

संदर्भ-सूची

१. S.S. (Kohli), Outlines of Sikh Thought, p. 64

२. राम सिंघ, गुरू नानक दा रहस्सवाद, पृष्ठ २७

३. प्यारा सिंघ पदम, सुखमनी दरशन, पृष्ठ ३८

४. S.S. (Kohli), A Critical Study of Adi Granth, p. 361

५. महिंदर कौर (गिल), गुरू अरजन देव : जीवन ते बाणी, पृष्ठ १३०

६. सुरजीत सिंघ, सुखमनी : एक आलोचनात्मक अध्ययन, पृष्ठ ३२७

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में स्त्री-पुरुष सम्बंध

*-डॉ. हरिसिमरन कौर**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में स्त्री को उसके अधिकार देने के लिए उसे विशेष सम्मान दिया गया है। ऐसा सम्मान विश्व के किसी अन्य धार्मिक ग्रंथ में दुर्लभ है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी में भारतीय नारी को पारिवारिक एवं सामाजिक सम्बंधों के अनुसार मर्यादाओं के घेरे में रहते हुए परिस्थितियों के प्रति समर्पित हो जाने का संदेश दिया गया है। गुरु साहिबान ने नारी के जिन रूपों का चित्रण किया है उन्हें दो मुख्य शीर्षकों के अन्तर्गत रखा जा सकता है:
क) सामाजिक शिष्टाचार के अनुरूप सदाचार पर आधारित सम्बंध। इनमें मुख्य हैं- बेटी, बहन, सखी, माता तथा सोहागन (पत्नी) के सम्बंध।
ख) सामाजिक शिष्टाचार के प्रतिकूल अनाचार पर आधारित सम्बंध, जैसे- वेश्या, कामिनी एवं दोहागन के सम्बंध।

गुरबाणी में स्त्री को जीवात्मा का प्रतीक मानते हुए उसके विविध रूपों का चित्रण किया गया है। गुरु साहिबान ने विभिन्न रूप तथा प्रतीकों द्वारा जीवात्मा और परमात्मा के आलौकिक मिलन के चित्र अंकित किए हैं। इस चित्रण में सामान्य स्त्री-पुरुष के सम्बंधों का जो लौकिक रूप अभिव्यक्त हुआ है वह अद्‌भुत है। इसके अध्ययन से साधारण स्त्री-पुरुष को सद्‌मार्ग पर चलते हुए अच्छा एवं सहज जीवन जीने का उपदेश प्राप्त होता है। गुरबाणी गृहस्थ में रह कर ईश्वर को प्राप्त करने का मार्ग बताती है। इस दृष्टि से इन सम्बंधों के लौकिक पक्ष का महत्व और भी विशिष्ट हो जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में प्रस्तुत स्त्री के विविध रूपों को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत विश्लेषित किया जा सकता है:

क) सामाजिक शिष्टाचार के अनुरूप शील, संयम एवं सदाचार धारण करने वाली स्त्रियां

(१) बेटी : भारतीय समाज की पारिवारिक संरचना में स्त्री के लिए जो पारंपरिक भूमिकाएं निर्धारित की गई हैं उनमें कन्या या बेटी का एक विशिष्ट स्थान है। यह नारी के अस्तित्व का प्रथम रूप है जिसमें वह एक मादा जीव के रूप में जन्म लेती है। कुछ देशों में कन्या का जन्म एक अभिशाप माना जाता है क्योंकि वहां पुत्रों को अधिक महत्व देकर पुत्रियों को निकृष्ट माना जाता है। एक शिशु बालिका के रूप में नारी एक कमजोर स्नायुओं वाला जीव होता है जो अत्यन्त भावुक होती है। उसका कोई निरपेक्ष अस्तित्व नहीं होता। बिना प्यार का सहारा पाए रहना उसके लिए अकल्पनीय होता है। बहुत कम भाग्यशाली कन्याओं को यह सहारा प्राप्त होता है, क्योंकि प्राय: कन्या को उपेक्षित जीवन जीने पर मजबूर होना पड़ता है। बेटी के विवाह की सामाजिक-सांस्कृतिक अनिवार्यता एवं उससे सम्बद्ध समस्याओं के कारण माता-पिता उसे भार समझते हैं। अरब देशों में कन्या के जन्म को एक बोझ समझा जाता है और वहां उसे जन्मते ही गड्‌डे में फेंक कर मार दिया जाता है। भारतीय समाज में

**हिंदी विभाग, पत्राचार पाठ्यक्रम विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला। मो : ९८७२३-१४१४१*

माता-पिता कन्या के पालन-पोषण, शिक्षा एवं स्वास्थ्य पर साधारणत: मजबूरीवश खर्च करते हैं जबकि बेटी अपने माता-पिता तथा भाई-बहनों से भावनात्मक स्तर पर जुड़ी होती है। पिता को वह नारी के प्रति पवित्रता, मृदुलता, कोमलता और ममता उभारने के लिए निर्मलता का प्रतिनिधित्व करती हुई नन्हीं-सी गुड़िया बनकर उसकी गोदी में खेलती है। भाई के लिए उसकी ममता, आत्मीयता, सरलता, सहृदयता देखते ही बनती है।

परिवार में बेटी पिता से अधिक माता के सम्पर्क में रहती है। उसे भावी गृहिणी और बच्चों के लालन-पालन का प्रशिक्षण माता द्वारा प्राप्त होता है। अपनी माता को घर में विभिन्न भूमिकाएं निभाते देख कन्या आप अपेक्षित व्यवहारों से संबंधित धारणाओं का आन्तरीकरण कर लेती है और भविष्य में उनका उपयोग करती है। माता अपनी बेटी को उसके विवाह से पूर्व ही गृह-कार्यों में निपुण कर देती है। सामान्यत: अभिभावक केवल विवाह के ध्येय से ही लड़की का पालन-पोषण करते हैं। इससे उसके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं होता। वह प्रत्येक सम्बंध (पिता, भाई, पति और पुत्र) को एक रक्षक के रूप में स्वीकार करती है। वह जन्म से मृत्यु तक पुरुष की छाया में जीती है। उसे जन्म से ही इस अधीनता में जीना सिखाया जाता है। वह एक नरजीव की तरह ही जन्म लेती है पर उसके लिए निर्धारित सामाजिक बंधन उसे एक सीमित दायरे में कैद कर देते हैं। इस दायरे में बंधी वह उसी के अनुरूप सोचती है। भारतीय परिवारों में माता के काम में हाथ बंटाती, भाई-बहनों को खिलाती, संभालती, खेल और विनोद में सौजन्य रखते हुए हर लड़की को देखा जा सकता है। इससे घर में रौनक होती है पर साथ ही इसे 'बेचारी' और 'परायी' भी समझा जाता है।

नारी का कन्या रूप में वर्णन

किसी भी समाज की संरचना, सांस्कृतिक प्रतिमान और मूल्य-प्रणाली स्त्री तथा पुरुष सम्बंधी सामाजिक प्रत्याशाओं पर प्रभाव डालती है और उस समाज की स्त्रियों की भूमिका एवं स्थिति का निर्धारण करती है। भारतीय समाज में सबसे अधिक महत्वपूर्ण संस्थाएं, धार्मिक परंपराएं, वंशक्रम प्रणालियां और पारिवारिक संगठन हैं जो स्त्री-पुरुष को, उनके अधिकारों एवं कर्त्तव्यों की धारणाओं को नैतिक आधार प्रदान करते हैं। इन संस्थाओं ने परंपरागत रूप से स्त्री के लिए बेटी, पत्नी, गृहिणी और मां इन चार परतों वाली भूमिका एवं स्थिति-क्रम निश्चित किया है। इससे स्त्री का संसार उसके परिवार तक ही सीमित रह जाता है और वह पुरुष के अधीन दूसरा स्थान प्राप्त करती है। भारतीय सामाजिक संरचना बेटी की अपेक्षा बेटे को अधिक महत्व देती है। प्राचीन काल में साधारणत: कहा जाता रहा है कि स्त्री एक निकृष्ट वस्तु है जिसे बंधनों में बांध कर रखना चाहिए। भारतीय परिवेश में बालक-बालिकाओं के बीच भेदभाव के विभिन्न आधार हैं। शारीरिक रचना के कारण बच्चों को जन्म देना और उनका पालन-पोषण करना स्त्री का कार्य है, इसलिए उसे बचपन से ही पुरुषों से अलग तरीके से पालपोस कर बड़ा किया जाता है। मनोवैज्ञानिक आधार पर देखा जाए तो लड़कियां स्वभाव से भीरु, भावुक और संवेदनशील होती हैं। वे लड़कों की तुलना में चेतन बौद्धिक क्षमता वाली, तार्किक सूझ-बूझ वाली और दूरदर्शी होती हैं। उन्हें आरंभ से ही अधीनता, नमनशीलता, समायोजन, आज्ञाकारिता, विनम्रता और समर्पण आदि गुणों को अपने व्यक्तित्व में शामिल करने की शिक्षा दी जाती है जिसे वे

सामाजिक परिवेश के अनुसार आत्मसात कर लेती हैं। बहुत छोटी आयु में ही एक लड़की को अपनी जिन्दगी अपूर्ण लगने लगती है और वह अपने अस्तित्व की वास्तविकता का सामना करने से डरती है। इस स्थिति में वह अपने लिए पुरुष के सहारे को जरूरी मानने लगती है। वह पुरुष की शक्ति के सामने स्वयं को समर्पित करने में कोई बुराई नहीं समझती। विवाह-संस्कार विधि के अन्तर्गत 'लाजा होम एवं परिक्रमा' की एक रीति है जो भारतीय परिवारों में कन्या के अस्तित्व को स्पष्ट करती है। 'लाजा' (भुना हुआ धान) विभिन्न भावनाओं का प्रतीक माना जाता है। 'लाजा' का मूल रूप 'धान' है। धान का पौधा एक जगह लगाया जाता है, फिर उसे फूलने-फलने के लिए दूसरी जगह रोपा जाता है। इसी तरह माता-पिता द्वारा पालित-पोषित कन्या, धान के पौधे की तरह पति-गृह में जाकर फूले-फले, इसलिए उसकी शादी कर पति-घर में भेजते हैं। जिस प्रकार धान अग्नि का संसर्ग पाकर खील बन जाता है, उसी प्रकार पति-पत्नी एक दूसरे का प्रेम पाकर 'खील' के समान प्रफुल्लित होवें, यह 'खील' का अभिप्राय होता है। लाजा होम की रीति के अन्त में परिक्रमा द्वारा इस बात का संकेत किया जाता है कि वधू के रूप में कन्या पतिकूल में प्रवेश करती है और अपने वर के साथ गृहस्थ धर्म की प्रतिज्ञा को पूर्णता तक पहुंचाती है।

यह वैज्ञानिक सत्य है कि स्त्री की आंतरिक जीवन-शक्ति पुरुष से अधिक होती है। अपनी इसी शक्ति के कारण वह सारा जीवन घर-गृहस्थी के अनेकों कार्य करते हुए भी थकती नहीं है। इन कार्यों के लिए उसे उसके घर-परिवार द्वारा प्राय: दो शब्द धन्यवाद के भी नहीं कहे जाते।

भारतीय परिवेश में कन्याओं सम्बंधी ऐसी दुर्भावनाओं के विरोध में कुछ प्रतिक्रियाएं हुईं जिनमें स्त्री की स्थिति में विशेष सुधार लाने का प्रयत्न किया गया। सिक्ख धर्म में स्त्री के मुख्यत: माता एवं पत्नी के रूप को महत्व प्राप्त हुआ। उसके बेटी रूप का वर्णन बहुत कम मिलता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में नारी का 'सोहागन' (पत्नी) रूप विशेष रूप से आया है, क्योंकि गुरु साहिबान ने जीवात्मा रूपी पत्नी का सम्बंध ईश्वर रूपी पति के साथ जोड़ने का प्रयत्न किया है। यह 'सोहागन' एक बेटी के रूप में ही जन्म लेती है। एक बेटी में अपने अस्तित्व को विकसित करने की आश्चर्यजनक क्षमता है। सिक्ख धर्म में बेटी को पुत्र के समान ही माना गया है और बेटियों को मारने वालों की घोर निंदा की गयी है। इस धर्म में विवाह योग्य बेटियों को बेचने की भी सख्त मनाही है। 'जनम साखी भाई बाला जी' में गुरु साहिब ने कहा है कि "कन्याओं को मारना और उनके नाम पर धन लेना बहुत बड़ा पाप है", परन्तु संसार अब भी इस कृत्य में प्रवृत्त हो रहा है। 'रहितनामा भाई चौपा सिंघ' में लिखा है, "गुरु का सिक्ख कंनिआ ना मारे, कुड़ीमार नाल ना वरते, कंनिआ दा पैसा न खाए।"

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में नारी के बेटी रूप का वर्णन लोक-व्यवहारिक तथा सामान्य रूप में हुआ है। श्री गुरु अमरदास जी ने सामाजिक परंपरा के संदर्भ में कहा है कि बेटी अपने माता-पिता के घर कुछ दिन रह कर अपने पति के घर जाती है। यह सामाजिक रीति है जो नारी की मर्यादा का आधार है। गुरु साहिब के वचन हैं :

पेईअड़ै दिन चारि है हरि हरि लिखि पाइआ ॥
सोभावंती नारि है गुरमुखि गुण गाइआ ॥
पेवकड़ै गुण संमलै साहुरै वासु पाइआ ॥

गुरमुखि सहजि समाणीआ हरि हरि मनि भाइआ ॥
(पन्ना १६२)

यहां दिन चार से भाव है थोड़ा समय। गुरु साहिब का उपदेश है कि वह कन्या सम्मानयोग्य है जो गुरु के द्वारा ईश्वर का गुणगान करती है, जो अपने माता-पिता के घर नेक कर्मों को अपनाती है और ससुराल जाकर बस जाती है। इन पंक्तियों में उस कन्या की प्रशंसा की गयी है जो अपने माता-पिता से अच्छे गुणों को प्राप्त करके ससुराल में जाकर आदर प्राप्त करती है। इस सामाजिक रीति का वर्णन भक्त कबीर जी की बाणी में भी हुआ है:

पेवकड़ै दिन चारि है साहुरड़ै जाणा ॥
अंधा लोकु न जाणई मूरखु एआणां ॥
(पन्ना ३३३)

इससे सामान्य भाव, एक कन्या का ससुराल जाना है जो लोक-व्यवहार से जुड़ा है, परन्तु इसका विशेष अर्थ इस संसार रूपी मायके को छोड़कर ईश्वर की शरण रूपी ससुराल जाने से है। श्री गुरु नानक देव जी ने एक बेटी की मन:स्थिति का वर्णन करते हुए उसकी पति-प्राप्ति की कामना को बड़े सुंदर शब्दों में व्यक्त किया है:

पेवकड़ै धन खरी इआणी ॥
तिसु सह की मै सार न जाणी ॥
सहु मेरा एकु दूजा नही कोई ॥
नदरि करे मेलावा होई ॥१॥रहाउ॥
साहुरड़ै धन साचु पछाणिआ ॥
सहजि सुभाइ अपणा पिरु जाणिआ ॥ (पन्ना ३५७)

मायके में रहती हुई बालिका इतनी बेसमझ होती है कि उसे अपने भावी पति के महत्व को समझने का ज्ञान नहीं होता। गुरबाणी के अनुसार जीव-स्त्री का मालिक (पति) एक है और उसके जैसा कोई और नहीं हो सकता। उसकी कृपा-दृष्टि से ही जीव-स्त्री उसे प्राप्त कर सकती है। इस दया-दृष्टि के फलस्वरूप वह ससुराल पहुंच कर प्रियतम के संयोग का सुख प्राप्त कर पाती है। नारी के इस रूप में उसकी अबोधता, कोमलता एवं बालपन का मार्मिक चित्रण है। अपने इस रूप में नारी पारदर्शी पवित्रता वाली कोमल कन्या है जो सांसारिक झमेलों को समझने में असमर्थ होती है। गुरु नानक साहिब का फरमान है :

बाबुल कै घरि बेटड़ी बाली बालै नेहि ॥
जे लोड़हि वरु कामणी सतिगुरु सेवहि तेहि ॥
बिरलो गिआनी बूझणउ सतिगुरु साचि मिलेइ ॥
ठाकुर हाथि वडाईआ जै भावै तै देइ ॥
(पन्ना ९३५)

पिता के घर बेटी को अपने हमउम्र बालक-बालिकाओं से प्रेम होता है। सतिगुरु की कृपा एवं मार्गदर्शन से वह पति-प्राप्ति की कामना को पूरा करती है। इस बात को समझने के लिए उसे ज्ञान की आवश्यकता होती है। संसार के सारे गुण ईश्वर के हाथ में होते हैं। वह जिसे चाहे उसे ये गुण प्रदान करता है। श्री गुरु अमरदास जी भी ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग बताते हुए बेटी के संदर्भ में कहते हैं :

पेईअड़ै धन अनदिनु सुती ॥
कंति विसारी अवगणि मुती ॥
अनदिनु सदा फिरै बिललादी
बिनु पिर नीद न पावणिआ ॥
पेईअड़ै सुखदाता जाता ॥
हउमै मारि गुर सबदि पछाता ॥ (पन्ना ११०)

मायके में पलती-बढ़ती बेसमझ बेटी को अपने स्वामी (पति) के विषय में कोई परवाह नहीं होती। वह दिन-रात बेचैन रहती है, क्योंकि उसे पति के संयोग के सुख का पता नहीं होता। इस संसार में जीव-रूपी-स्त्री अपने सुखों एवं अहम् का त्याग करके, गुरु द्वारा दिए ज्ञान

को पहचान कर अपने पति-परमेश्वर को प्राप्त कर सकती है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में नारी के बेटी रूप का वर्णन बहुत कम हुआ है। इस पवित्र ग्रंथ में आत्मा रूपी स्त्री का सम्बंध परमात्मा रूपी पति से जोड़ते हुए वैवाहिक सम्बंधों का वर्णन बहुत अधिक मात्रा में हुआ है। माता-पिता के घर एक बेटी के रूप में स्त्री का जीवन ससुराल घर में उसके जीवन की तुलना में स्वतंत्र होता है। इसलिए उसके जीवन में समस्याएं और उलझनें साधारणत: विवाह के बाद आरंभ होती हैं। इस सत्य का प्रतिपादन करते हुए बाबा फरीद जी ने लिखा है :

जां कुआरी ता चाउ वीवाही तां मामले ॥
फरीदा एहो पछोताउ वति कुआरी न थीऐ ॥
(पन्ना १३८१)

जब बेटी कुंआरी होती है तो उसके मन में विवाह का चाव होता है, जब ब्याही जाती है तो मुश्किलें शुरू हो जाती हैं। फिर उसे यह दुख होता है कि अब वह फिर से कुंआरी नहीं हो सकती।

२. स्त्री का बहन रूप में वर्णन

सामान्यत: स्त्री के चार रूप होते हैं--मां, बहन, बेटी और पत्नी। ये चारों ही रूप अपने आप में अनुपम होते हैं। भारतीय परिवारों में बहन का रिश्ता प्रेम एवं ममता से परिपूर्ण होता है। वह भाई को अधिकाधिक महत्व प्रदान करती है और अपने ममत्व भाव से भाई को मानवीय मर्यादाओं के बंधन बांधती है। बहन वात्सल्य-युक्त कोमल संवेदनाओं की प्रतिमा बन कर भाइयों की सुश्रूषा भी करती है। भाई तथा बहन के बीच का सम्बंध अत्यन्त पवित्र होता है। भाई अपने मन की बात बहन से करता है, क्योंकि बहन के मन में भाई के प्रति ममता एवं सहानुभूति होती है। परिवार के भावनात्मक क्षेत्र में अपनी गतिविधियों से बहन अपने स्नेह को भाइयों पर न्यौछावर करती है। भाई के लिए उसकी आत्मीयता, ममता, सरलता एवं सहृदयता सचमुच प्रशंसनीय होती है। बहन का हृदय स्नेह एवं सौजन्य से परिपूर्ण होता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में नारी के इस रूप का चित्रण बहुत कम हुआ है। इस पवित्र ग्रंथ में 'बहन' शब्द का प्रयोग अपनेपन के भाव में हुआ है और यह प्रयोग सामान्य भाषा में बोले जाने वाले 'बहन' शब्द में किया गया है। गुरु साहिबान ने इसे एक निकट सम्बंध के रूप में चित्रित करते हुए इसका प्रयोग भाई के मन का रहस्य समझने वाली के रूप में किया है। पंजाबी सभ्याचार में भाई-बहन के रिश्ते को श्री गुरु नानक देव जी और उनकी बहन बेबे नानकी जी के स्नेह की महक से गुंधा हुआ महसूस किया जाता है। श्री गुरु नानक देव जी की सबसे पहले अगर कोई मुरीद हुईं तो वह उनकी बहन बेबे नानकी जी थीं। बेबे नानकी जी ने ही उन्हें सबसे पहले पहचाना था। भाई काहन सिंघ नाभा ने 'महान कोश' में 'नानकी' शब्द का अर्थ बताया है--'नानक को जानने वाली'। बहन-भाई का रिश्ता बड़ा अनूठा होता है, पानी की तरह पवित्र, ठंडा और मीठा, जलती धूप में किसी वृक्ष की छाया की तरह और डूबते मन को धीरज देने वाला। हर दुख-सुख में साथ खड़े होने का नाम 'भाई' है और भीगी पलकों को अपने दामन में छुपा लेने का नाम 'बहन' है। गुरु नानक साहिब की बाणी है:

आवहु भैणे गलि मिलह अंकि सहेलड़ीआह ॥
मिलि कै करहु कहाणीआ संम्रथ कंत कीआह ॥
(पन्ना १७)

अर्थात् आओ मेरी अम्मा-जाइओ बहनो! मेरे गले से मिलो। मेरी सखिओ! आओ मिलकर वे बातें (कहानियां) करें जिनका सम्बंध समर्थ कंत (ईश्वर) से हो। बहनों एवं

सखियों से मन की बातें सांझी करना नारी का स्वभाव होता है। गुरबाणी में नारी-स्वभाव की इस विशिष्टता-सखीपन, साहचर्य-भाव को स्पष्ट किया गया है। इसी संदर्भ में श्री गुरु रामदास जी का वचन है:

आवहु भैणे तुसी मिलहु पिआरीआ ॥
जो मेरा प्रीतमु दसे तिस कै हउ वारीआ ॥
(पन्ना ९६)

यह जीव-रूपी स्त्री की विनय है। वह अपनी प्रिय बहनों पर कुर्बान जाना चाहती है जो उसे उसके प्रियतम को प्राप्त करने का मार्ग बता सकती हैं। इसी संदर्भ में श्री गुरु रामदास जी का फरमान है:

गुरमुखि नामु सुनहु मेरी भैना ॥
एको रवि रहिआ घट अंतरि मुखि बोलहु गुर अंम्रित बैना ॥ (पन्ना ५६१)

गुरु साहिब उपदेश करते हैं कि हे मेरी बहनो! गुरु के माध्यम से ईश्वर का नाम श्रवण करो। प्रभु सभी के हृदय में निवास करता है। अपने मुख से तुम उस प्रभु का गुणगान करो, अमृतमयी गुरबाणी का उच्चारण करो। यहां 'बहन' (भैणे) शब्द का सामान्य प्रयोग है। श्री गुरु रामदास जी के वचन हैं :

सभु मनु तनु जीउ करहु हरि प्रभ का इतु मारगि भैणे मिलीऐ ॥ (पन्ना ५६१)

इसी संदर्भ में गुरु नानक साहिब के वचन हैं:

मोरी रुण झुण लाइआ भैणे सावणु आइआ ॥
(पन्ना ५५७)

सावन की सुहावनी ऋतु में मोर की मीठी आवाज सुनकर एक स्त्री अपनी बहन से कहती है कि सावन आ गया है। गुरु नानक साहिब जी की बाणी में भी 'भैण' शब्द का प्रयोग हुआ है:

कबहूं साहिबु देखिआ भैण ॥
ऊडां ऊडि चड़ां असमानि ॥
साहिब संम्रिथ तेरै ताणि ॥ (पन्ना १२५७)

जीवात्मा रूपी स्त्री अपनी बहन से पूछती है कि क्या उसने प्रभु स्वामी को देखा है? गुरु साहिब फरमाते हैं कि सर्वशक्तिमान समर्थ ईश्वर की कृपा से जीव स्त्री ऊंचे आकाश में उड़ सकती है अर्थात् उसकी कृपा सर्वोच्च है। ईश्वर से बिछुड़े हुए जीव कभी सुखी नहीं रहते। श्री गुरु अरजन देव जी के वचन हैं:

जो जीअ हरि ते विछुड़े से सुखि न वसनि भैण ॥ (पन्ना १३६)

३. श्री गुरु ग्रंथ साहिब में नारी का सखी रूप में चित्रण

नारी का स्वाभाविक गुण होता है--सखियां बनाना और उनके साथ मेल-मिलाप रखना। अविवाहित स्त्रियां अपनी सखियों के साथ मिल-बैठ कर अपने भावी पति के विषय में वार्तालाप करती हैं जबकि विवाहित स्त्रियां अपने जीवन की महत्वपूर्ण बातों को सखियों के साथ बांटती हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'सखी' शब्द का प्रयोग कई स्थानों पर हुआ है जिसका रूप अति सामान्य है। श्री गुरु अमरदास जी अपनी बाणी में फरमाते हैं :

आवहु मिलहु सहेलीहो मै पिरु देहु मिलाइ ॥
पूरै भागि सतिगुरु मिलै पिरु पाइआ सचि समाइ ॥
(पन्ना ३८)

जीव-स्त्री को अपनी सखियों में विश्वास है कि वे उसे प्रिय को प्राप्त करने का मार्ग बता सकती हैं। परमात्मा रूपी प्रियतम को मिलाने के लिए सद्गुरु की आवश्यकता होती है। अच्छे भाग्य से ही ऐसे सद्गुरु की प्राप्ति होती है। श्री गुरु अमरदास जी का विश्वास है कि :

सुणि सखी सहेली जीअ की मेली गुर कै सबदि समाओ ॥ (पन्ना २४३)

सखी का सम्बंध बहुत निकटता का और प्रिय सम्बंध है, जिस पर विश्वास करना

स्वाभाविक है। स्त्रियों का स्वाभाविक गुण होता है कि वे अपनी सहेलियों से अपने मन की बातें करती हैं। इस संदर्भ में श्री गुरु अमरदास जी ने फरमाया है :

बहि सखीआ जसु गावहि गावणहारीआ ॥
हरि नामु सलाहिहु नित हरि कउ बलिहारीआ ॥
(पन्ना ६४५)

भारतीय सामाजिक जीवन की परंपरा में धार्मिक स्थानों या घरों में एक साथ बैठकर भजन-कीर्तन करना एक सामान्य रीति है। इसी संदर्भ में गुरबाणी में जीव-स्त्रियों द्वारा प्रभु की महिमा का गुणगान करने का परामर्श दिया गया है। ये जीव-स्त्रियां पति रूपी ईश्वर पर बलिहारी जाती हैं। श्री गुरु रामदास जी के पवित्र वचन हैं :

गुरमुखि सखी सहेली मेरी मो कउ देवहु हरि प्रान जीवाइआ ॥ *(पन्ना ४९३)*

सुधार का अद्‌भुत उपाय

श्री गुरु नानक देव जी महाराज के पास एक डाकू आया और सुधरने का उपाय पूछा। गुरु नानक साहिब जी ने उससे चोरी-डाका-झूठ आदि छोड़ने को कहा। इस पर उसने अपनी स्वभावजन्य मजबूरी जताकर कोई अन्य उपाय बताने को कहा। तब गुरु जी कुछ सोचकर बोले, "जो मन में आये करो, लेकिन दिन-भर में जो भी चोरी-डाका-झूठ आदि अपराध करो, शाम होने पर सब लोगों के सामने उन्हें प्रकट कर दो।" इसे सरल उपाय मानकर डाकू लौट गया। जब बहुत दिनों के बाद वह आया तो बोला, "लोगों के सामने अपनी बुराइयां कहने में तो बड़ी शर्म आती थी, इसलिए मैंने बुरे कामों को करना ही छोड़ दिया।"

उक्त ज्ञानदायक कथा में आत्म-सुधार और समाज-सुधार का रहस्य छिपा है। जो लोग सच्चे मन से चाहने के बाद भी अपनी बुराइयों को छोड़ नहीं पा रहे हैं, उनके लिए उक्त कथा रास्ता दिखाते प्रकाश-स्तंभ की तरह है। इंसान बहुत कुछ बर्दाश्त कर लेता है लेकिन अपनी बदनामी, अपनी गिरती सामाजिक प्रतिष्ठा को नहीं झेल पाता। ऐसे में अगर हम अपनी असली दुश्मन बुराइयों को उनकी बेदर्दगी की धमकी दें, डरायें तो बहुत संभव है कि वे भयभीत होकर भाग जाएं। हां, इसके लिए शुरू में थोड़ी हिम्मत जरूर चाहिए, क्योंकि ये ढीठ बुराइयां केवल धमकी से शायद न मानें और एक-दो बार हमें इन्हें सरेआम बेपर्दा करना ही पड़े, लेकिन अगर हम खुद को मजबूर बनाकर ऐसा करेंगे तो आगे से बुराइयां केवल धमकी देने से ही भाग जाएंगी और आत्म-सुधार का दीपक हमारे अन्तर्मन को प्रकाशित कर देगा। ऐसे में बुराइयां करने के सच्चे आकांक्षी उक्त प्रयोग तो कर ही सकते हैं।

-श्री प्रशांत अग्रवाल
४०, बजरिया मोतीलाल,
बरेली-२४३००३ (उ. प्र.)
मो ९४११६-०७६७

सो साचा सालाहीऐ . . .

*-डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ**

सिक्ख गुरु साहिबान ने सदियों से जड़ें जमाई हुई अनेक भ्रांतियों को स्पष्टता से तोड़ते हुए परमात्मा के बारे में और मनुष्य के विचार व आचार के सच्चे स्वरूप को सामने रखा। उन्होंने कहा कि परमात्मा करुणा का सागर है और मनुष्य के पालन-पोषण में किसी भी तरह की ढील नहीं बरतता। उसे मनुष्य से प्रेम है और मनुष्य की चिंता अपने बच्चे की तरह कर रहा है। वह इतना महान है कि मनुष्य के हित पहले सोच रहा है और उसे उत्पन्न बाद में कर रहा है:

पहिलो दे तैं रिजकु समाहा ॥
पिछो दे तैं जंतु उपाहा ॥
तुधु जेवडु दाता अवरु न सुआमी लवै न कोई लावणिआ ॥ *(पन्ना १३०)*

प्रभु के बारे में आम धारणा थी कि वह सातवें आसमान पर स्वर्ग में रहता है, कठिन तप-साधना से प्राप्त होता है। उसे पहुंच के बाहर एक ऐसी शक्ति के रूप में स्थापित कर दिया गया था कि आम आदमी उस अलभ्य को पाने के बारे में सोच ही नहीं पाता था। गुरु साहिबान ने उसके जिस स्वरूप को सामने रखा वह इतना सरल, सहज और प्राप्य लगा कि उससे सम्बंध स्थापित करने में कोई कठिनाई नहीं लगी। यह सत्य एकदम गले उतरने वाला था कि जो परमात्मा सृष्टि का सृजक है, सब जीवों पर अपनी दया करके उन्हें पाल-पोस रहा है, वह पहुंच से दूर कैसे हो सकता है? जिसके हृदय में इतनी चिंता है, करुणा है, कृपा है, वह उनसे स्वयं को दूर कैसे रख सकता है जिस पर वह कृपा कर रहा है? परमात्मा तो कण-कण में रमा हुआ है और हर स्थिति में व्यक्त हो रहा है।

आपे रसीआ आपि रसु आपे रावणहारु ॥
आपे होवै चोलड़ा आपे सेज भतारु ॥
रंगि रता मेरा साहिबु रवि रहिआ भरपूरि ॥१॥रहाउ॥
आपे माछी मछुली आपे पाणी जालु ॥
आपे जाल मणकड़ा आपे अंदरि लालु ॥
आपे बहु बिधि रंगुला सखीए मेरा लालु ॥
नित रवै सोहागणी देखु हमारा हालु ॥
(पन्ना २३)

परमात्मा स्वयं रस है और स्वयं ही उस रस का पान कर रहा है। मछली भी है और स्वयं जाल भी है। गुरु साहिबान ने ऐसे अनेक उदाहरण देकर समझाने का प्रयास किया है कि परमात्मा कितना सर्वव्यापक और सर्वउपलब्ध है तथा उसे पाना भी उतना ही सहज है। मनुष्य को उसकी अलभ्यता के सारे भ्रम तोड़ देने चाहियें :

आल जाल भ्रम मोह तजावै प्रभ सेती रंगु लाई ॥
मन कउ इह उपदेसु द्रिड़ावै सहजि सहजि गुण गाई ॥ *(पन्ना ४९९)*

एक आम धारणा मानव-सभ्यता के साथ ही चली आई है कि जो जितना महत्वपूर्ण है उतना ही दुर्लभ है। प्राचीन काल में मंदिरों में दलितों का प्रवेश वर्जित था। राजा के महल के

**E-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो. : ९४१५९६०५३३*

आस-पास भी नहीं पहुंचा जा सकता था। आज भी स्थितियां कमोबेश वैसी ही हैं। जो मनुष्य जितना शक्ति-सम्पन्न है वह जनसाधारण की पहुंच से उतना ही दूर है। यह तो मनुष्य का हाल है। परमात्मा तो सर्वशक्ति-सम्पन्न है, वह कैसे हर किसी की पहुंच में हो सकता है? परमात्मा की तो कोई उपमा ही नहीं की जा सकती :

तू सुलतानु कहा हउ मीआ तेरी कवन वडाई ॥
जो तू देहि सु कहा सुआमी मै मूरख कहणु न जाई ॥
तेरे गुण गावा देहि बुझाई ॥
जैसे सच महि रहउ रजाई ॥ (पन्ना ७९५)

परमात्मा की महिमा का वर्णन किया ही नहीं जा सकता और ऐसा करना मूर्खतापूर्ण होगा। अपने आप को मिटा कर भी ऐसा करना सम्भव नहीं होगा। इसके बाद भी परमात्मा को पाने की बात करना एक अमूल्य विचार था जिसने समूचे परिदृश्य को बदल कर रख दिया। यह विचार था परमात्मा से ही परमात्मा को मांग लेने का। वह तो सर्वशक्तिमान है। उससे बड़ा दाता और उससे बड़ा दयालु कौन है? इसलिये उससे ही उसकी कृपा मांग लें कि वह मन में बस जाये और मन प्रसन्न हो जाये :

तुम दइआल सरणि प्रतिपालक मो कउ दीजै दानु हरि हम जाचे ॥
हरि के दास दास हम कीजै मनु निरति करे करि नाचे ॥ (पन्ना १६९)

बस, इतना ही करना है कि परमेश्वर को अपना प्राण-आधार बना लेना है और अपना सर्वस्व उसे समर्पित कर देना है :

प्रभ जी तू मेरे प्रान आधारै ॥
नमसकार डंडउति बंदना अनिक बार जाउ बारै ॥
ऊठत बैठत सोवत जागत इहु मनु तुझहि चितारै ॥
सूख दूख इसु मन की बिरथा तुझ ही आगै सारै ॥
तू मेरी ओट बल बुधि धनु तुम ही तुमहि मेरै परवारै ॥
जो तुम करहु सोई भल हमरै पेखि नानक सुख चरनारै ॥ (पन्ना ८२०)

मनुष्य में इतनी विनम्रता उत्पन्न हो जाये कि वह अपना सारा ध्यान प्रभु के चरणों में ही केंद्रित कर दे। दिन-रात, हर अवस्था में उसके चरणों में ही अपना चित्त लगाये रहे और बार-बार उसकी वंदना में रत रहे। मनुष्य यह दृढ़ विश्वास कर ले कि प्रभु के चरणों में ही उसके सारे दुखों का निस्तारण है। इस समर्पण में न किसी बल की आवश्यकता है, न किसी बुद्धि अथवा धन की। परमात्मा को पाने के लिये कोई कौशल नहीं चाहिये। बस, सहज समर्पण की अवस्था चाहिये। यह सहज अवस्था न तो धन से प्राप्त की जा सकती है और न ही रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण से। रजोगुण और तमोगुण जहां मानवीय दुर्बलताओं के प्रतीक हैं वहीं सतोगुण सांसारिकता से ऊपर उठने का द्योतक है। गुरु साहिबान के अनुसार सतोगुण भी परमात्मा को पाने का मार्ग नहीं है। इस सम्बंध में श्री गुरु अमरदास जी के निम्न वचन अनमोल हैं :

त्रिहु गुण विचि सहजु न पाईऐ त्रै गुण भरमि भुलाइ ॥ (पन्ना ६८)

रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण भ्रम में डालने वाले हैं। सहज अवस्था सतोगुण से श्रेष्ठ है और वास्तविक मार्ग है :

सहजे गाविआ थाइ पवै बिनु सहजै कथनी बादि ॥
सहजे ही भगति ऊपजै सहजि पिआरि बैरागि ॥
सहजै ही ते सुख साति होइ बिनु सहजै जीवणु

(शेष पृष्ठ २६ पर)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में लोक-काव्य-रूप : 'सोहिला' और 'अलाहुणीआं'

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

सोहिला

सोहिला का अर्थ है: "खुशी के मंगल गीत, जिसमें किसी की महिमा अथवा यश-गायन हो।" 'सोहिला' शब्द 'सुहेला', सु (श्रेष्ठ), हेला (खेल) के संयोग से बना हुआ लगता है और यह पद उन मंगल गीतों के लिए प्रचलित हो गया है, जिनमें से किसी व्यक्ति की शोभा हो। 'सोहिला' को आनंद का गीत अथवा शुभ समय गाया जाने वाला गीत कहा जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'सोहिला' शीर्षक के अंतर्गत एक विशेष बाणी है, जिसका पठन सोने के समय करने की रीति है। डॉ. महिंदर कौर (गिल) ने जन्म-उत्सव के गीतों को सोहर, सोहिले अथवा सोहिला की संज्ञा प्रदान की है। वास्तव में 'सोहिले' का एकीकरण 'सोलहे' के साथ भी कर लिया जाता है। ये दोनों शब्द समानार्थी हो जाते हैं, परंतु 'सोलहा' शब्द अंक परक है। इसका संबंध १६ अंक के साथ है। इस अंक परक छंद रूप के १६ बंद होते हैं पर इसका स्वभाव 'सोहिले' वाला ही रहा है। 'सोहिले' विशेष अवसरों पर गाए जाते हैं। एक बच्चे के जन्म समय, दूसरा कुड़माई (सगाई) अथवा विवाह के समय।

'सोहिले' बहनों द्वारा गाए जाने वाले गीत हैं। इनमें मंगलमयी उदगारें, चाव, सधरों के प्रगटावे के साथ मां रानी का यश और बाबुल राजा की महिमा होती है। इस प्रकार कहा जाता है कि "सोहिला ऐसा लोक काव्य-रूप है, जिसमें किसी की स्तुति का गायन किया गया हो। इसमें जन्म, सगाई और विवाह के समय मंगलमयी गीत सम्मिलित होते हैं।"

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मारू राग में श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी और श्री गुरु अरजन देव जी ने 'सोलहे' काव्य-रूप का प्रयोग किया है। इसका स्वभाव लोक-काव्य-रूप 'सोहिले' जैसा ही है। इनमें से श्री अकाल पुरख प्रभु की महिमा गाई गई है। गुरमुख, संत-जनों का यश भी इनमें शामिल है। गुरबाणी में अंकित 'सोलहे' का, लोक-काव्य-रूप 'सोहले' से यह अंतर भी है कि लोक-काव्य-रूप में व्यक्तिगत अथवा सांसारिक लोगों की महिमा होती है, जबकि गुरबाणी में अंकित 'सोलहे' में प्रभु, परमेश्वर अथवा संत-जनों की प्रशंसा का उल्लेख है। गुरु साहिबान ने सोलहे की रचना १६ बंदों में की है।

उदाहरण मात्र मारू राग में निम्न अंकित १६ बंदों का 'सोहिला' प्रस्तुत है:

सचु सालाही गहिर गंभीरै ॥
सभु जगु है तिस ही कै चीरै ॥
सभि घट भोगवै सदा दिनु राती
आपे सूख निवासी हे ॥१॥
सचा साहिबु सची नाई ॥
गुर परसादी मंनि वसाई ॥
आपे आइ वसिआ घट अंतरि
तूटी जम की फासी हे ॥२॥
किसु सेवी तै किसु सालाही ॥
सतिगुरु सेवी सबदि सालाही ॥

**पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय खोज केंद्र, गुरदासपुर (पंजाब)-१४३५२१*

सचै सबदि सदा मति ऊतम
अंतरि कमलु प्रगासी हे ॥ (पन्ना १०४८)

गुरबाणी में लोक-काव्य-रूप 'सोहिले' का रूपांतरण रूप प्रस्तुत है। विवाह के समय गाए जाने वाले 'सोहिले' का रूपांतरण, "साचे शबद की कमाई से धन, पिर का मेल प्रभु-कृपा से हुआ" में किया गया है :

--हम घरे साचा सोहिला साचै सबदि सुहाइआ राम ॥
धन पिर मेलु भइआ प्रभि आपि मिलाइआ राम ॥ (पन्ना ४३९)
--अनहद सबद वजाए हरि जीउ घरि आए हरि गुण गावहु नारी ॥
अनदिनु भगति करहि गुर आगै सा धन कंत पिआरी ॥ (पन्ना ७७०)
--कामणि मनि सोहिलड़ा साजन मिले पिआरे राम ॥
गुरमती मनु निरमलु होआ हरि राखिआ उरि धारे राम ॥ (पन्ना ७७२)

मिलाप-समय गाए जाने वाले 'सोहिले' को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'मंगल' कह कर इस प्रकार रूपांतरण किया गया है :

मनि चाउ भइआ प्रभ आगमु सुणिआ ॥
हरि मंगलु गाउ सखी ग्रिहु मंदरु बणिआ ॥
हरि गाउ मंगलु नित सखीए सोगु दूखु न विआपए ॥
गुर चरन लागे दिन सभागे आपणा पिरु जापए ॥ (पन्ना ९२१)

अलाहुणीआं

पंजाबी लोक-काव्य-रूप 'अलाहुणी' का समानार्थक अंग्रेजी भाषा का पद एलेजी (Elegy) है। एलेजी अपने प्रचलित रूप में मृतुसोग अर्थात् विलापमयी गीत (कविता) होता है। कोशगत अर्थों में भी एलेजी दुख और विलाप के प्रगटावे का गीत है। एलेजी का सम्बंध व्यक्ति विशेष की याद (memory) के साथ जुड़ा हुआ है और यह एक लंबा वृत्तांतक काव्य होता है, जबकि 'अलाहुणी' के बोल सामान्य रूप में मातमी रंग उभारने के लिए उचारे जाते हैं। 'अलाहुणी' में मृतक प्राणी के गुण गाए जाते हैं। इस प्रकार 'अलाहुणी' वो काव्य-रूप है जिसमें किसी बिछड़े अथवा मरे हुए व्यक्ति को याद करके उसके गुण गाए जाते हैं। 'वैण' और 'कीरने' भी 'अलाहुणी' जैसे सोगमयी हैं, जिसमें मृतक प्राणी के प्रति अपनी निजी भावनाएं प्रकट की जाती हैं। इनके गाने की शैली निराली है। 'अलाहुणीआं' सामूहिक रूप में गाई जाती हैं, परन्तु 'वैण' और 'कीरने' औरतें सिर जोड़कर अथवा अकेले ही मुंह ढक कर गाती हैं। बूढ़े व्यक्ति की मौत के समय गाई जाती 'अलाहुणी' में कई बार मजाक, हंसी भी की जाती है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में श्री गुरु नानक देव जी और श्री गुरु अमरदास जी ने 'अलाहुणी' लोक-काव्य-रूप को पावन बाणी रचना का संचार-माध्यम बनाया है। राग वडहंस में श्री गुरु नानक देव जी ने 'अलाहुणी' की रचना की और श्री गुरु अमरदास जी ने इसी प्रकृति के चार छंतों की रचना की। इन पर 'अलाहुणी' शीर्षक नहीं है पर छंत रूप होने के कारण आप जी ने 'कंत', 'कामणि' का प्रतीक प्रयोग करके मृत्यु की याद दिलाई है। इन छंतों में मृत्यु का वातावरण चित्रित किया गया है और यह 'अलाहुणीआं' की धारणा पर ही अंकित है, क्योंकि यह श्री गुरु नानक देव जी द्वारा रचित 'अलाहुणीआं' के प्रसंग में ही अंकित है, इसी लिए इनको भी 'अलाहुणीआं' की संज्ञा ही दी जा सकती है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'अलाहुणीआं'

रूपांतरण रूप में अंकित है। नमूने मात्र उदाहरण प्रस्तुत हैं:

--प्रभु सचड़ा हरि सालाहीऐ कारजु सभु किछु करणै जोगु ॥
सा धन रंड न कबहू बैसई ना कदे होवै सोगु ॥
न कदे होवै सोगु अनदिनु रस भोग सा धन महलि समाणी ॥
जिनि प्रिउ जाता करम बिधाता बोले अंम्रित बाणी ॥ *(पन्ना ५८२)*

--सो पिरु साचा सद ही साचा है ना ओहु मरै न जाए ॥
भूली फिरै धन इआणीआ रंड बैठी दूजै भाए ॥
(पन्ना ५८३)

सो साचा सालाहीऐ . . .

(पृष्ठ २३ का शेष)

बादि ॥
सहजि सालाही सदा सदा सहजि समाधि लगाइ ॥
सहजे ही गुण ऊचरै भगति करे लिव लाइ ॥
सबदे ही हरि मनि वसै रसना हरि रसु खाइ ॥
(पन्ना ६८)

जीवन में यदि सहजता नहीं है तो जीवन कर्म के वाद-विवाद में ही उलझा रहेगा और कुछ भी हासिल नहीं हो सकेगा। परमात्मा में आस्था उपजती है और परमात्मा का हृदय में निवास हो जाता है। श्री गुरु नानक देव जी से लेकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तक सभी गुरु साहिबान का जीवन इसी सहजता को व्यवहारिक रूप से प्रकट करता है। गुरु नानक साहिब जी ने अपने जीवन के अंतिम अट्ठारह वर्ष एक साधारण गृहस्थी का पहरावा धारण करके खेतों में दिन भर अपना कार्य करते हुए व्यतीत किये। श्री गुरु अंगद देव जी और श्री गुरु अमरदास जी ने सहज-सेवा के बल पर ही गुरगद्दी प्राप्त की। इस तरह के तथ्य और तत्व अन्य सभी गुरु साहिबान के जीवन में प्रकट हुए। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपने पूरे परिवार का बलिदान देने के बाद भी स्वयं को अडोल अवस्था में रखकर सहज भाव का नया रूप सामने रखा।

सहज अवस्था तब प्राप्त होती है जब मनुष्य याचक बन जाता है और प्रभु को एक मात्र समर्थ दाता की तरह देखते हुए उससे याचना करता है। यह याचना भौतिक सुख-सुविधाओं की प्राप्ति की नहीं होती, न ही किसी मुक्ति अथवा मोक्ष की प्राप्ति की। यह याचना भी सीधी और सरल होती है :

सतिगुर भीखिआ देहि मै तूं संम्रथु दातारु ॥
हउमै गरबु निवारीऐ कामु क्रोधु अहंकारु ॥
लबु लोभु परजालीऐ नामु मिलै आधारु ॥
अहिनिसि नवतन निरमला मैला कबहूं न होइ ॥
नानक इह बिधि छूटीए नदरि तेरी सुखु होइ ॥
(पन्ना ७९०)

परमात्मा से मांगना है तो यह मांगें कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि विकारों का समूल नाश हो जाये और मन में उसका प्रिय नाम बस जाये। यह ऐसा आधार है जो कभी टूटता नहीं, छूटता नहीं और सदैव नूतन व निर्मल बना रहता है। नाम का आधार मिलने पर विकारों से मुक्ति मिल जाती है और सच्चे सुख की प्राप्ति होती है। परमात्मा जब कृपा करता है तो निहाल कर देता है :

मारू ते सीतलु करे मनूरहु कंचनु होइ ॥
सो साचा सालाहीऐ तिसु जेवडु अवरु न कोइ ॥
(पन्ना ९९४)

बाबा बंदा सिंघ बहादर की शहादत

*-डॉ. नरेश**

सन् १७१३ में फरुख्सियर बादशाह बना तो उसने अब्दुसमद खां को पंजाब का गवर्नर नियुक्त करके आदेश दिया कि वह बाबा बंदा सिंघ बहादर की बढ़ती हुई शक्ति का शमन करे। समद खां का शौर्य सर्वविदित था और उसे 'दिलेर जंग' के नाम से पुकारा जाता था। उधर बाबा बंदा सिंघ बहादर की शक्ति कम होने के स्थान पर उत्तरोत्तर बढ़ती चली गई। १७१५ के आरंभिक वर्षों में उसने बटाला तथा कलानौर पर अधिकार जमा लिया। इस समाचार से हतप्रभ फरुख्सियर ने मुगल, पठान तथा राजपूत सेनाएं पंजाब की ओर रवाना कर दीं। इन सेनाओं ने गुरदास नंगल की गढ़ी को घेर कर रसद की आवाजाही बंद कर दी। आठ महीने बाबा बंदा सिंघ बहादर तथा उसकी खालसा सेना शाही फौजों का मुकाबला करती रही। आखिर जब खाने के लिए वृक्षों के पत्ते भी समाप्त हो गए तो पंजाब के शेर पुत्तर निढाल हो गए। बाबा बंदा सिंघ बहादर को उसके ७८० जांबाज सिपाहियों समेत गिरफ्तार कर लिया गया।

ये बंदी २९ फरवरी, १७१६ को दिल्ली लाए गए। बाबा बंदा सिंघ बहादर को लोहे के पिंजरे में बंद करके दिल्ली के गली-बाजारों में घुमाया गया। ५ मार्च, १७१६ से बाबा बंदा सिंघ बहादर के सिपाहियों को क्रमवार कत्ल किया जाने लगा। शाही सेनाएं तीन महीने तक बाबा बंदा सिंघ बहादर और उनके २६ साथियों के साथ अमानवीय व्यवहार करती रहीं ताकि उनसे उनके खजाने का पता मालूम कर सके। जब हर तरह का अत्याचार भी इन रण-बांकुरों का मुंह न खुलवा सका तो हताश शाही सेना ९ जून, १७१६ को इन सबको महरौली ले गई। बाबा बंदा सिंघ बहादर की आंखों के सामने उसने चार वर्ष के अबोध सपूत अजै सिंघ के टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए। उसकी छाती फाड़कर उसका दिल निकाला गया, जो जबरदस्ती बाबा बंदा सिंघ बहादर के मुंह में ठोंसा गया। अब बाबा बंदा सिंघ बहादर की बारी आई। पहले उनकी दाईं और फिर उनकी बाईं आंख निकाली गई। तदनंतर उसके हाथ-पांव काटे गए। लोहे की सलाखें गर्म करके उनके शरीर में घुसेड़ी गईं और अंततोगत्वा उनका शीश धड़ से अलग कर दिया गया।

अत्याचार सहन कर रहे बाबा बंदा सिंघ बहादर का धैर्य, धर्महठ, संतोष एवं आत्म-विश्वास देखकर एक मुसलमान अहलकार ने उनसे कहा, "हैरानी की बात है कि तुम जैसा भला आदमी पंजाब में तबाही मचाता रहा और आज स्वयं तबाह हो रहा है।" शांत-संयत बाबा बंदा सिंघ बहादर ने उत्तर दिया, "पाप जब अपनी सीमा पार कर लेता है तो परमात्मा मेरे जैसे किसी बंदे को पाप का अंत करने के लिए भेजता है। ऐसे पाप का अंत करते समय कई बार तुम्हारे जैसे जालिमों के जुल्म का शिकार भी होना पड़ता है।"

बाबा बंदा सिंघ बहादर का समकालीन इतिहासकार मुहम्मद हादी कंवर खां अपनी पुस्तक 'तजकिरा-ए-सलातीन चुगताइया' में लिखता है कि "यह जो कुछ घटित हुआ, यह किसी के

**१६९, सेक्टर-१७, पंचकूला-१३४१०९ (हरियाणा)*

बल-बुद्धि का परिणाम नहीं था, मात्र ईश-कृपा से संभव हुआ। सर्वविदित है कि बादशाह बहादुर शाह अपने चार शहजादों तथा अनेक सरदारों सहित इस विद्रोह को दबाने का भरसक प्रयास करता रहा लेकिन बुरी तरह से असफल रहा और अब यह ईश-कृपा ही है कि यह (बाबा बंदा सिंघ बहादर) सिक्ख सरदार अपने हजारों साथियों के साथ भूख के हाथों विवश होकर समर्पण करने पर विवश हो गया।" इसी समर्पण का परिणाम थी वह भयानक शहादत, जिसका जाम बाबा बंदा सिंघ बहादर और उनके सिपाहियों को पीना पड़ा, क्योंकि शायद यही नियति थी।

आपका पत्र मिला

यह पत्रिका मैं अलग ही संभाल कर रखता हूं

'गुरमति ज्ञान' पत्रिका हर माह मुझे प्राप्त होती है। इसे पढ़कर मन और दिल को बहुत तसल्ली मिलती है और गुरु जी का आशीर्वाद प्राप्त होता है। हाल ही में अपने घर पर थोड़े दिन पहले मेरी तबीयत बिगड़ जाने से मैं यहां गुरु गोबिंद सिंघ अस्पताल में एडमिट था। तब मेरी बेटी 'गुरमति ज्ञान' पत्रिका मुझे अस्पताल दे जाती। बस, यह पत्रिका पढ़ता रहता और मेरा दुख-दर्द गायब हो गया गुरु के आशीर्वाद से। 'गुरमति ज्ञान' पत्रिका नवंबर २००९ का अंक 'बुजुर्ग श्रेणी विशेषांक' मुझे बेहद पसंद आया। हरेक इंसान का बुढ़ापा जरूर आने वाला है। यह पत्रिका पढ़कर मुझे अच्छी प्रेरणा मिली। यह पत्रिका मैं अलग ही संभाल कर रखता हूं। हमारे यहां हिंदी कम और गुजराती ज्यादा पढ़ने वाले हैं और मुझे पहले से ही हिंदी का अभ्यास अच्छा लगता है। *-अनिल व्यास, जामनगर।*

कितने कष्ट सहन् करते हैं माता-पिता!

संसार में माता-पिता के समान कोई तीर्थ-स्थल नहीं है। उनकी सेवा करने से बड़ा कोई धर्म नहीं है। हमारे भारतवर्ष में पुराने समय में संयुक्त परिवार की प्रथा थी और घर के मुखिया को ही सर्वोपरि समझा जाता था।

आधुनिक युग में संयुक्त परिवार की प्रथा ही विलीपित हो गई है, एकल परिवार की प्रथा हो चुकी है। माता-पिता अपने बच्चों की खातिर कितने कष्ट सहन करते हैं! वे स्वयं तकलीफें पाकर भी अपने बच्चों के अरमानों को पूरा करते हैं। आधुनिक युग में विरले ही 'सरवण कुमार' होते हैं जो कि अपने माता-पिता को कभी स्वप्न में भी दुखी नहीं देख सकते।

-आर एल थानवी, मेड़ता।

बलिदान का इतिहास रेलवे स्टेशनों पर लगायें व विद्यालयों में जोड़े!

हमने "बाबा बंदा सिंघ बहादर विशेषांक" पढ़ा तो रूह कांप गई। हमारे पूर्वजों को लम्बे काल के शासन में मुगल शासक किस तरह परेशान करते रहे। इसका जीवंत इतिहास पढ़कर लगा कि नई पीढ़ी भी इस इतिहास से परिचित होना चाहिए। बाबा बंदा सिंघ बहादर फतह के ३०० वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में "बाबा बंदा सिंघ बहादर बलिदान की अदभुत मिसाल" शीर्षक के तहत समग्र जीवन-दर्शन को हिंदी, गुरमुखी, अंग्रेजी आदि भाषा में स्वर्णाक्षरों में लिखकर देश के प्रमुख बड़े रेलवे स्टेशनों पर लगाया जाए ताकि लोग अपने पूर्वजों की बलिदान-गाथा जान सकें। साथ ही कमेटी भारत सरकार को लिखे कि बाबा बंदा सिंघ का इतिहास केन्द्रीय विद्यालयों में भी जोड़ा जा सके। इसके लिए प्रधानमंत्री से भेंट कर उनके समक्ष अपनी मांग रखी जाए।

-सुरेन्द्र कुमार, हटा, दमोह।

सतु संतोखु होवै अरदासि

*–भाई किरपाल सिंघ**

१. सत्य पुरुष की आवश्यकता : अरदास किसी को संबोधन करके ही की जा सकती है, इसलिए हमें पहले उस हस्ती के अस्तित्व में पूर्ण विश्वास की आवश्यकता होती है जिसे संबोधन करते हुए अरदास की जाये। हमें परमात्मा का कोई अनुभव नहीं है और न ही उसकी हस्ती या उसकी ताकतों से परिचित हैं। परमात्मा के प्रति हमारा ज्ञान बहुत कम है। बस, इतना ही जितना हमें किताबें पढ़कर या उन पुरुषों से सुनकर, जो हमारी तरह ही उसकी ताकत से अपरिचित हैं, मिलता है। इस दशा में हम कुछ भी ध्यान नहीं कर सकते। यह हो सकता है कि कोई ऐसा हो जिसे परमात्मा का ज्ञान हो और उस सर्व-समर्थ से एकतार हो। उसकी संगत में एक विशेष आनंद की प्राप्ति होती है। उसकी सियानप के वजनदार शब्द मन में एक दम बैठ जाते हैं। उसके उच्चरित शब्दों में परमात्मा की चुंबकीय शक्ति होती है। उसकी उपस्थिति में विशेष प्रकार की स्थिरता तथा भीतरी शांति महसूस होती है। वह प्रभु के बारे में कोई तर्क पेश नहीं करता। वह परमात्मा के सम्बंध में अधिकार भरे शब्दों में स्पष्ट बातें करता है, क्योंकि उसे परमात्मा का सीधे ज्ञान होता है और उसके साथ जीवन के हर पल में अंदर से जुड़ा होता है।

सतिगुरु ही ऐसी ताकत है जिसके चरणों में हमें जाना चाहिए और सभी अरदासें उसी को ही संबोधित होनी चाहिए। विश्वास हमारे पुरुषार्थ में सफलता के लिए पहला कदम है। हमें अपने गुरु की सामर्थ्य पर पूर्ण एवं दृढ़ विश्वास होना चाहिए। अध्यात्म विज्ञान की शुरुआत के लिए हमें बड़े प्यार तथा नम्रता से उसके आगे फरियाद करनी चाहिए। उसे की गई अरदास हमारे दिल की गहराइयों में से होनी चाहिए। यदि परा-विद्या का ज्ञान (आत्म-ज्ञान और परमात्मा के ज्ञान का विज्ञान), जहां सारे ज्ञान का विकास होता है, देने के लिए हमें दया से अपना लेता है तो हमें खुद को भाग्यशाली समझना चाहिए।

२. सम्पूर्ण लिवलीनता : इस सम्बंध में दूसरी आवश्यकता पूर्ण रूप में लीनता की है। अरदास करते समय हमें शेष सब वस्तुओं यहां तक कि अपना शरीर या अन्य शेष शारीरिक सम्बंधों को भी भूल जाना चाहिए, केवल उद्देश्य की पूर्ति ही हमारा ध्येय होना चाहिए।

३. सच तथा संतोष : हमारी अरदासें भी तब ही फलीभूत होती हैं जब हम जीवन के हर पहलू से सच्चे हों। हमें शुद्ध विचार, शुद्ध इच्छाएं, शुद्ध रोजी तथा शुद्ध चाल-चलन ग्रहण करना चाहिए। विचारों, शब्दों एवं कर्मों में शुद्धता सबसे पहले आनी चाहिए। ब्रह्मचर्य जीवन, जो कि जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है और यह ईमानदारी, पवित्रता तथा सच्चाई से सम्बंधित ही नहीं बल्कि इनसे उपजता है।

मन-इंद्रियों के बाहरी फैलाव को रोकने के लिए संतोष अति सहायक सिद्ध होता है। जब

**२२१, सेक्टर-१८, पंचकूला (हरियाणा)*

तक हमारे मन की उड़ान स्थिर नहीं होती तब तक सच्ची-सुच्ची (शुद्ध) अरदास संभव नहीं है। मन ही प्रभु की ज्योति को, जब यह उस (मन) पर पड़े, प्रकाशित कर सकता है :

सतु संतोखु होवै अरदासि ॥
ता सुणि सदि बहाले पासि ॥ (पन्ना ८७८)

अर्थात् सच व संतोष के धारण करने से ही अरदास संभव है। जिसे परमात्मा सदा सुनता है तथा उसे बुलाकर अपने पास बिठा लेता है। ऐसी अरदास सदा सफल होती है।

"आप अपने आप में सच्चे रहो और यह इस तरह होना चाहिए जैसे प्रत्येक रात्रि के बाद दिन आता है, इसी तरह आप भी किसी के सामने झूठे नहीं होगे।" (विलियम शेक्सपीयर)

४. शुद्ध और उभारू चेतनता : अरदास हमारी रूह की गहराई से ही होनी चाहिए। जिस भी चीज के लिए हम अरदास करें उसकी ख्वाहिश सच्ची होनी चाहिए और वह हमारी आत्मा की भीतरी पुकार होनी चाहिए। अरदास इस तरह की हो कि हमारी रूह के सभी भीतरी भाव प्रकट हो जाएं, हमारा रोम-रोम जुबान में बदल जाए और हमारी सभी नाड़ियां सितार की तारों की भांति राग अलापें, जिसमें इतने बेसुध हो जाएं कि हमें रूह के राग के अलावा कुछ भी सुनाई न दे :

कबीर मुलां मुनारे किआ चढहि सांई न बहरा होइ ॥
जा कारनि तूं बांग देहि दिल ही भीतरि जोइ ॥
(पन्ना १३७४)

५. आप मुहारता (स्वतः प्रस्फुटन) : अरदास दर्द में रूह की पुकार होने के कारण बहुत ही सुंदर तथा प्राकृतिक पुकार है। जब यह खुद मुंह से निकलती है तो ऐसे लगता है जैसे धरती में से खुद ही पानी का ठंडा फुहारा फूट पड़ा हो। अरदास के लिए परमात्मा का सम्बंध केवल उन वास्तविक भावनाओं से है जो सरल शब्दों में हों, न कि बने-बनाए भाषणों, व्यर्थ के उच्चारण, प्रदर्शनकारी शब्द-रचना तथा विद्वक व्याख्यानों से।

शब्द कितने भी टूटे-फूटे क्यों न हों, आदमी के भावों को प्रकट कर देते हैं। उनमें प्यार की तड़प है और जो कुछ भी उनके मन में होता है वही सामने आता है।

अरदास करने के लिए किसी विशेष समय या विशेष घड़ी की जरूरत नहीं। वास्तव में कोई भी बिना रुकावट के लगातार अरदास कर सकता है। यह तो आत्मा की पुकार है जो किसी भी समय ज्वालामुखी की तरह निकल सकती है। अरदास किसी भी समय, दिन या रात में नियमित रूप में करनी चाहिए। फिर भी प्रातः काल या संध्या काल अरदास के लिए अधिक उचित माना गया है :

अंम्रित वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु ॥
(पन्ना २)

अर्थात् अमृत वेला ही उस प्रभु को मिलने या उसके गुण गाने के लिए सर्वोत्तम है।

हमारे में से बहुत-से अरदास के लिए समय तलाश करते रहते हैं और दुर्भाग्यवश हम काम-काज में इतने व्यस्त होते हैं कि हमें अरदास के लिए समय ही नहीं मिलता। अरदास के लिए किसी तरह के दार्शनिक व्याख्यान या विशेष प्रबंध की जरूरत नहीं होती। जहां तक हो सके अरदास के समय हमें बड़े प्यार तथा सरल शब्दों में केवल अपने मन के भीतरी भावों को प्रकट करने की आवश्यकता है। एक सच्ची अरदास के लिए किसी विशेष समय या जगह की आवश्यकता नहीं होती, लेकिन मुश्किल यह है कि हमें यह नहीं पता कि अरदास कैसे करें?

ऐसे हालात में हमें परमात्मा से केवल यही पूछना चाहिए कि हे प्रभु! हमें अरदास करने की समझ बख्शिश करो।

साधारणतया जब हम मुसीबतों के शिकार होते हैं और मायूस हो जाते हैं तो अरदास का सहारा लेते हैं, लेकिन जब मुसीबत टल जाती है तो हम सोचते हैं कि यह हमारी कोशिशों का परिणाम है और हम पुन: अरदास करने की आवश्यकता महसूस नहीं करते। इस तरह की हानिकारक गिरावटों से हमें बचने की आवश्यकता है। अरदास की वास्तव में हर कदम पर आवश्यकता पड़ती है। कठिन समय मुसीबत में से निकलने के लिए अरदास करनी चाहिए। कठिन मुश्किल के समय जब कोई मददगार नहीं होता, उस सर्वशक्तिमान पिता का ख्याल ही मन को ढांढस पहुंचाता है। जब हम सफलता के नजदीक हों तो अरदास करें कि हम में कोई घमंडी प्रसन्नता न आ जाए और प्रभु की दया-कृपा ही मांगें, क्योंकि इसके बिना हम कभी भी सफल नहीं हो सकते। इच्छाओं की पूर्ति या मुसीबतों से छुटकारा मिलते ही हमें उस सर्वशक्तिमान प्रभु की दातों का शुक्रगुजार होना चाहिए। प्रभु हमारा प्यारा पिता है, जिसके बिना हम रह नहीं सकते। अरदास हमारे जीवन का एक आवश्यक अंग होनी चाहिए।

अरदास पाप-कर्मों से मुक्त करती है

अरदास के समय अपने पाप तथा कमियां केवल स्वीकार करने से कुछ भी हासिल नहीं होता। यदि हमारी सोच यह है कि केवल पापों को परमात्मा के आगे स्वीकार करने से ही ये धोये जा सकते हैं और हम पुन: उनमें लिप्त होते रहें तो यह हमारी भूल है। हमारी यह सोच हमें पापों से बचाने की बजाय और पापों में फंसाती है। पापों से क्षमा केवल प्रभु या सतिगुरु ही दे सकते हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि हम उसके हुक्म को मानें और पूरी तरह उस पर अमल करें, शेष सब उस पर ही छोड़ दें:

किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि ॥
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥
(पन्ना १)

अर्थात् कैसे कोई उस सच को जान सकता है और कैसे झूठ का संग छोड़ सकता है। श्री गुरु नानक देव जी फरमाते हैं कि एक रास्ता यह है कि उसकी रजा को अपनी इच्छा मान लें जिसकी इच्छा का सदका हम धरती पर आए हैं।

प्रत्येक कर्म का प्रतिकर्म होता है। हर भूल की या बद-कर्म की सजा होती है। जब तक रूह अपनी इच्छा से इंद्रियों के घाट को छोड़ना सीख नहीं लेती तब तक इस रसों-कसों का तेज-पत्र के वृक्ष की भांति विकास होता रहता है :

बहु सादहु दूखु परापति होवै ॥
भोगहु रोग सु अंति विगोवै ॥
हरखहु सोगु न मिटई कबहू विणु भाणे भरमाइदा ॥ (पन्ना १०३४)

अर्थात् भोगों से दुख मिलते हैं। भोगों-रसों का अंत बीमारी है। भोगों से छुटकारा तब तक नहीं होता जब तक मनुष्य प्रभु की रजा में नहीं आता।

एक तरफ यदि वह हमारी भूलों को बख्शता है तो आगे से गलती न करने के लिए चेतावनी देता है--"अब तक जो किया है आगे मत करना", यह उसकी चेतावनी होती है।

अरदास केवल प्रेम द्वारा प्रभु के मिलने की भीतरी इच्छा है और सतिगुरु के हुक्मों को मानने से ही अरदास हमें उस तरफ ले जाने में सहायी होती है।

यदि हम प्यार सहित अपने सतिगुरु की सामर्थ्य पर निर्भर हो जाएं तो उसकी दया, कृपा उसके प्रेम-स्रोत का सदका बह जाएगी। फिर उसकी दया की कोई सीमा नहीं रहती। यहां तक कि उसके द्वारा दी गई सजा भी उसके प्यार की धारा में रंगी हुई होती है और वैर-भाव से रहित होती है।

क्योंकि हम सब उस प्रभु की अंश हैं और इस तरह आपसी सम्बंध रखते हैं। कोई भी सरबत्त (समूह) के भले के लिए अरदास कर सकता है :

तेरे भाणे सरबत्त दा भला।

टेलीपेथी ज्ञान से अब सिद्ध होता है कि कैसे व्यक्तियों के दिलों की धड़कनों में समानता होती है, चाहे वे आपस में कितनी भी दूरी पर क्यों न हों। विचारों की तरंगों में बहुत शक्ति होती है और इनका प्रभाव-दायरा असीमित होता है। क्या असंख्य खंडों-ब्रह्मंडों की रचना या विनाश प्रभु की विचार-शक्ति का फल नहीं? सतिगुरु तथा सिक्ख के मध्य हमदर्दी की तरंगें प्यार के संदेश अकाल्पनिक वेग से लाती तथा ले जाती हैं। यही अद्‌भुत सम्बंध प्रभु से जोड़े जा सकते हैं। उस असीम ताकत से एकतार होने से कोई भी ख्यालों के आधार पर ही दूसरों का बहुत भला कर सकता है, क्योंकि मूल रूप में हम सब उस रूहानी धारा का अंश हैं।

मनुष्य को साधारणत: यह नहीं पता कि यह प्रभु-सत्ता के मार्ग पर जाने के लिए सही रहेगी या नहीं। उदाहरणस्वरूप भले ही फसलें पकने पर हों, गर्मी तथा पसीने से परेशान शहरी लोग बारिश की खातिर अरदास करते हैं और दूसरी तरफ हमारे गांवों में किसान अधिक से अधिक और गर्मी पड़ने के लिए अरदास करते हैं, जिससे उनकी खेती जल्दी पक जाए।

मनुष्य केवल अपने दायरे में ही सोचता है। वह इस बात से भी अनजान है कि उसके लिए क्या अच्छा रहेगा। कई बार वो ऐसी वस्तुओं की इच्छा करता है कि यदि इसे मिल जाएं तो वह फायदे की जगह उसके लिए दुख का कारण बन जाती हैं और उसको पश्चाताप के साथ अपने कदम वापिस मोड़ने पड़ते हैं। इस सम्बंध में सोना-स्पर्श की कहानी का बहुत महत्व है- "राजा मिडास ने बहुत अरदासों के बाद यह वरदान प्राप्त किया कि जिस चीज को भी छुए, सोने की बन जाए। कुछ पल के बाद ही उसे अपनी गलती का एहसास हुआ जब वह खाना मुंह में डालने लगा तो कौर सोने में बदल गई। पानी जब उसके होंठों को लगा तो वह भी सोना बन गया। उसकी इकलौती पुत्री जब दौड़ कर अपने पिता के गले से लिपटी तो सोने का बुत बन गई। जब वह नर्म-नर्म बिस्तर पर आराम करने के लिए अपने बिस्तर पर गया तो वह सख्त धातु सोने का बन गया।"

प्रभु या सतिगुरु हमारे भूत काल तथा भविष्य को एक खुली किताब की भांति जानते हैं। वे ऐसी अरदासें स्वीकार नहीं करते जो आगे जाकर हमारे लिए हानिकारक सिद्ध हों। एक प्यार करने वाला पिता अपने बच्चे को जहर भला कैसे दे सकता है? इसलिए मालिक से केवल वही चीजें मांगो जिसमें भलाई हो :

नाथ कछूअ न जानउ ॥
मनु माइआ कै हाथि बिकानउ ॥ (पन्ना ७१०)

अर्थात् हे प्रभु! मुझे कुछ नहीं पता कि मेरे लिए अच्छा क्या है और बुरा क्या है, क्योंकि मैं विश्व की माया के हाथों बिक चुका हूं।

आओ! अरदास करें, हे मेरे मददगार! मुझे उस रास्ते पर चला जिस पर चलने से मैं भलाई की तरफ बढ़ूं और मुझे ऐसा रास्ता दिखा

कि अंत में तू खुश हो जाए और मुझे मुक्ति मिल जाए। हम सबको केवल उस चीज के लिए ही अरदास करनी चाहिए जो लोक तथा परलोक में सहायी हो।

परमात्मा को न तो खुशामद तथा न ही बेकार की उदाहरणों से मोहित किया जा सकता है। वह दया का सागर है। उसकी दया ही सब में काम करती है तथा हम उसके बिना जी नहीं सकते। हां, हम उसकी दया अपने भले के लिए, अपनी तरफ उसके पात्र बनकर खींच सकते हैं। नम्रता एवं विश्वास मन को साफ करते हैं, उसकी दया, कृपा का बड़ा साधन बनाते हैं। इन दोनों की मदद से ही हम अपने मन को अंतरमुखी बना सकते हैं, जो इस समय इंद्रियों के भोगों-रसों में फंसकर वाह्यमुखी बना हुआ है। जब तक हम इसकी दिशा प्रभु की तरफ करने में सफल नहीं होते तब तक उसकी दया का इसमें संचार नहीं होता। नम्रता से तथा सच्चे दिल से की अरदासें ही प्रभु की दया तथा मनुष्य के मन में सुमेल जोड़ने में सहायी होती हैं। मालिक के आगे अपने कामों या जरूरतों की पूर्ति के लिए अरदास केवल एक अर्थात् पूर्ण शुद्ध हृदय की आवश्यकता है। जो उसकी दया से जुड़ जाए फिर उसकी दया अपने आप ही खिंची चली आएगी।

परमात्मा सबकी जानने वाला है, इसलिए ऊंची-ऊंची अरदासों से हम उसे ज्यादा जान नहीं सकते। हमारे दृढ़ संकल्प एवं अरदासों से उस पूर्ण को और अधिक पूर्ण नहीं किया जा सकता। हमें तो केवल कवि मिल्टन के कथन के अनुसार 'ठहरने और इंतजार' करने की आवश्यकता है। उसकी दया खुद ही खिंची चली आएगी और हमें भरपूर कर देगी। परमात्मा अटल है, आदि से अंत तक स्थिर रहने वाला है :

आदि सचु जुगादि सचु ॥
है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥ (पन्ना १)

आप जी की कृपा प्राप्त करके मेरे अंदर यह विश्वास बंध गया है और अंदर से यही पंक्तियां बोलों के द्वारा बाहर निकलती हैं :

जत कत देखउ तत तत तुम ही मोहि इहु बिसुआसु होइ आइओ ॥
कै पहि करउ अरदासि बेनती जउ सुनतो है रघुराइओ ॥ (पन्ना २०५)

अर्थात् जहां और जिधर भी मेरी नजर जाती है वहां आप ही नजर आते हो। अब मुझे यह विश्वास हो गया है कि हे प्रभु! मुझे अब किसी और के आगे अरदास करने की आवश्यकता नहीं है, जबकि आप ही मेरी अरदास सुन रहे हो।

मनुष्य का केवल यही कर्त्तव्य है कि वह प्रभु की दी हुई अनगिनत सौगातों एवं आशीषों का शुक्रिया अदा करे। इसके विपरीत हम उसकी सौगातों में ही खो जाते हैं तथा आखिर इच्छाओं की भावना में ही बह जाते हैं :

दाति पिआरी विसरिआ दातारा ॥
जाणै नाही मरणु विचारा ॥ (पन्ना ६७६)

अरदास रूहानियत का सार है। इससे शरीर तथा आत्मा को बहुत आनंद मिलता है। इससे सम्पूर्ण संतुष्टि और तृप्ति हासिल होती है जो किसी अन्य वस्तु से हासिल नहीं हो सकती। अरदास से एक अलग ही किस्म की खुशी प्राप्त होती है, जिसकी कल्पना भी नहीं हो सकती। एक किस्म का भीतरी सुख हमारे अंदर समा जाता है।

अरदास में बहुत ही प्रभावशाली बल है। इससे इंसान संघर्षमयी जीवन में बड़ी निडरता तथा सफलता से जीता है। अरदास वास्तव में

सारी बीमारियों का एक पक्का इलाज है और इन सबसे बढ़कर भीतरी सुख-शांति एवं संतोष (तृप्ति) प्रदान करती है। इससे इंसान को धैर्य एवं आशा प्राप्त होती है और उसमें अनुकूल परिवर्तन आ जाता है।

अरदास एक कुंजी है। इससे परमात्मा की बादशाहत के दरवाजे खुलते हैं। इससे हमारे भीतरी कपाट खुल जाते हैं और भीतर से भी भरपूर शक्ति एवं सफलता प्राप्त होती है। इंसान का स्वभाव है कि पहले वह खुद कोशिशें करता है, अंत हार कर अरदास के सहारे सब कुछ परमात्मा पर छोड़ देता है। तभी तो कहते हैं कि जहां सारी कोशिशें निष्फल हो जाती हैं वहां अरदास काम करती है। जिन चीजों की मनुष्य ने कभी कल्पना भी नहीं की होती अरदास के द्वारा उससे भी बढ़कर प्राप्त हो जाता है। इससे हर चीज नए आध्यात्मिक रंग में रंगी हुई दिखाई देती है।

आखिर, अरदास से असल मालिक के प्रति हमारी आंख खुल जाती है जो हमें वास्तविकता से परिचित करवाती है, इस जीवन के प्रति नया महत्व प्रदान करती है और धीरे-धीरे इंसान को नई दुनिया में ले जाती है, जहां वह नए वर्ग में दाखिल हो जाता है। अरदास से मनुष्य में अंतर-चेतना आ जाती है तथा वह परमात्मा के हुक्म में प्रभु का छुपा हुआ हाथ देखने योग्य होता है जो साधारणतः लुप्त है और इतना सूक्ष्म है कि आम इंसान उसे जान तथा देख नहीं सकता। जितना ज्यादा भीतरी सम्पर्क बढ़ेगा उतनी ही आत्मा प्रभु को ग्रहण करती है। जब प्रभु से पूर्ण एकाग्रता हो जाए तो ही कोई उसका जीता-जागता स्वरूप बनता है।

कविता

ये बेटियां . . .

दादा-दादी की प्यारी
मम्मी-पापा की दुलारी
अपनी किलकारियों से सबके होंठों पर
मुस्कान बिखेरती
ये बेटियां . . . हां, ये बेटियां।
घर की असली दौलत हैं ये बेटियां
अपने गुणों से सबका दिल जीततीं
समूचे परिवार को एक सूत्र में बांधतीं
मां-बाप को बुढ़ापे में संबल देतीं
ये बेटियां . . . हां, ये बेटियां।
माता-पिता से आजीवन जुड़ी रहतीं,
बेटों से ज्यादा शालीन, समझदार और आज्ञाकारी
स्नेह, प्यार, ममता,
कर्त्तव्य व समर्पण की सुंगध बिखेरतीं
हर रोल में बेहतर किरदार निभातीं
घर की बगिया को हरी-भरी करतीं
इन्द्र-धनुषी खुशियों की सौगात लातीं
अभिशाप नहीं वरदान हैं
ये बेटियां . . . हां, ये बेटियां।
दिल के बहुत करीब होतीं
सब दिवस, त्योहार, बिन बेटियों के सब अधूरे
घर-आंगन, सामाजिक दायरे बिन बेटी सब सूने
आओ! बदल दें घिसीपिटी सब मान्यताएं
सब त्यौहार बेटियों संग मनाएं!
न करें कन्या-भ्रूण हत्याएं!
समाप्त करें रूढ़िवादी परंपराएं!
दें एक नई लहर को जन्म,
नहीं बेटी अब पराया धन!
मिटा दें बेटी-बेटे में अंतर!
शुरू करें महिला सशक्तिकरण!
समाप्त करें सामाजिक कुरीतियां!
क्योंकि ये बेटियां हैं बेटियां।

-बीबा जसप्रीत कौर, ३, बसंत विहार, जवद्दी रोड, डुगरी, लुधियाना। मो: ९५१०४-३२८६९

पाकिस्तान के ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिबान का ब्यौरा

*-स. सुरजीत सिंघ**

धर्म-स्थल समस्त सद्गुणों से सम्पन्न सुसंस्कृति के आधार होते हैं जो सार्वभौम, शाश्वत एवं सत्य सत्ता के केन्द्र हैं। धर्म वह पवित्र सिद्धांत एवं आदर्श है जो जीवन-मूल्यों को अनुशासित, सुव्यवस्थित एवं श्रेष्ठ कर्त्तव्य-पालन का मार्ग प्रशस्त करता है, क्योंकि जीवन एक अमूल्य रत्न है। आत्म-लोचन, आत्म-परिष्कार द्वारा स्वार्थ को त्यागते हुए दूसरों का हित अर्थात् परमार्थ कर बुराई रूपी कीचड़ से बचकर आत्मा को पवित्र बनाया जा सकता है। धर्म-स्थल एवं धर्म-ग्रंथ जीवन में सम्पूर्णता के प्रत्यक्ष हैं, बोधक हैं, मार्गदर्शक हैं, पथ हैं, पाथेय हैं, आदेश हैं, उपदेश हैं, साधना हैं एवं सिद्धि हैं।

जब सन् १९४७ को भारत का विभाजन हुआ तो बहुत से धार्मिक पवित्र स्थल--गुरुद्वारे, जो नये बने पाकिस्तान के नियंत्रण वाले क्षेत्र में स्थित थे, वे समस्त हिंदोस्तान की भूमि से कटकर पाकिस्तान के अधिकार-क्षेत्र में चले गए। यह अत्यंत दुख का विषय तो है ही, जिनके लिए खालसा पंथ अपनी नित्यप्रति की अरदास में हर समय अकाल पुरख परमात्मा से इन बिछुड़े हुए गुरुद्वारों के समूह दर्शन एवं सेवा-संभाल की दृढ़ इच्छा-शक्ति के साथ निरंतर याचना करता रहता है। पाकिस्तान स्थित गुरुद्वारों में से लगभग १८४ ऐसे ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिबान थे जो विभाजन पूर्व शिरोमणि गुरुद्वारा कमेटी से संबंधित थे और जिनका सम्पूर्ण नियंत्रण एवं प्रबंधन भी शिरोमणि कमेटी ही करती थी। विभाजन उपरांत वर्ष १९४८ के जून माह में श्रद्धालुओं का प्रथम जत्था लाहौर स्थित श्री गुरु अरजन देव जी के शहीदी-स्थल गुरुद्वारा डेरा साहिब एवं महाराजा रणजीत सिंघ के समाधि-स्थल, गुरुद्वारा साहिब के दर्शनार्थ गया था। तदुपरांत उसी वर्ष ही अन्य जत्था हवाई जहाज से गुरुद्वारा पंजा साहिब, पुनः गुरु नानक साहिब के प्रकाश पर्व पर गुरुद्वारा ननकाणा साहिब शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के नेतृत्व में दर्शनार्थ भेजा गया था। यह परंपरा उसी प्रकार सड़क, रेल एवं वायु मार्ग से अभी भी निरंतर चली आ रही है।

गुरुद्वारा ननकाणा साहिब खालसा पंथ के लिए सर्वोच्च महत्व का स्थान है, जहां श्री गुरु नानक देव जी सन् १४६९ को अवतरित हुए थे। शहर ननकाणा साहिब में निम्नलिखित ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिबान मुख्य रूप से हैं:

(१) गुरुद्वारा जन्म-स्थान श्री गुरु नानक देव जी
(२) गुरुद्वारा बाल लीला साहिब
(३) गुरुद्वारा पट्टी साहिब
(४) गुरुद्वारा तंबू साहिब
(५) गुरुद्वारा माल जी साहिब
(६) गुरुद्वारा किआरा साहिब
(७) गुरुद्वारा अकाल बुंगा साहिब

यह विशेष वर्णन का विषय है कि ननकाणा साहिब में स्थित गुरुद्वारा साहिबान के नियंत्रण में विभिन्न खातों में बंधी लगभग १८००० एकड़ जमीन थी जिसमें भवन, बाग-बगीचे, कृषि-भूमि, मकान, दुकानें, यात्रियों के ठहरने के लिए

*५७-बी, न्यू कॉलोनी, गुमानपुरा, कोटा (राजस्थान)

विश्रामालय, आश्रम, अस्पताल एवं स्कूल, भवन इत्यादि निर्मित थे, किन्तु पाकिस्तान सरकार द्वारा सार-संभाल एवं संरक्षण न होने के कारण गुरुधामों की अधिकतर जमीन-जायदादें अब जीर्ण-शीर्ण हालत में हैं और खुर्द-बुर्द एवं अतिक्रमित होती जा रही हैं। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी एवं कई सिक्ख संस्थाओं द्वारा पाकिस्तान स्थित गुरुद्वारों की सार-संभाल एवं मान-मर्यादा हेतु भारत सरकार एवं पाकिस्तान से वर्ष १९४८ से ही निरंतर अनुरोध किया जाता रहा है किन्तु आज तक प्रगति नहीं हुई है अर्थात् न तो सरकारी स्तर पर ही इन गुरुधामों की सार-संभाल हो रही है और न ही शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी को ही इस कार्य हेतु अधिकृत किया जा रहा है, जो कि अत्यन्त चिंता का विषय है। भारत सरकार को इस संबंध में विशेष ध्यान देते हुए कोई ठोस हल शीघ्र ही निकालना होगा। यही हाल पाकिस्तान स्थित अन्य गुरुद्वारा साहिबान एवं उनसे संलग्न जमीन-जायदाद का है। श्री ननकाणा साहिब सिक्ख पंथ के लिए उसी प्रकार सर्वोच्च श्रद्धा का केन्द्र है जैसे हिंदू धर्म के लिए अयोध्या एवं मथुरा, मुसलमानों के लिए मक्का, यहूदियों के लिए येरूशलम एवं ईसाइयों के लिए रोम विटीकन। भारत की सरहद से मात्र एक किलोमीटर की दूरी पर ही पाकिस्तान की तहसील शंकरगढ़ में ऐतिहासिक गुरुद्वारा जोती जोत श्री गुरु नानक देव जी, करतारपुर स्थित है जहां पर श्री गुरु नानक देव जी ने अपने जीवन के अंतिम दिन गुजारे थे।

पाकिस्तान स्थित गुरुद्वारा साहिबान की संख्या तो काफी अधिक है किन्तु यहां पर केवल उन्हीं ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिबान को, जो कि विभाजन-पूर्व शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अधीन थे, जिलेवार क्रमानुसार अंकित किया जा रहा है :

जिला लाहौर

१. गुरुद्वारा डेरा साहिब। यह पंचम पातशाह का शहीदी-स्थान है।
२. गुरुद्वारा जन्म-स्थान, गुरु रामदास जी, चूना मंडी
३. गुरुद्वारा बाउली साहिब, पातशाही पंजवीं
४. गुरुद्वारा लाल खूही
५. गुरुद्वारा पहिली पातशाही
६. गुरुद्वारा छेवीं पातशाही
७. गुरुद्वारा शहीदगंज साहिब, भाई तारू सिंघ जी शहीद
८. गुरुद्वारा शहीदगंज साहिब, भाई मनी सिंघ जी शहीद
९. गुरुद्वारा शहीदगंज साहिब सिंघनीआं
१०. गुरुद्वारा दीवानखाना
११. गुरुद्वारा भाई बुद्धू का आवा
१२. गुरुद्वारा छेवीं पातशाही भुजंग
१३. गुरुद्वारा छेवीं पातशाही, अमर सिद्धू
१४. गुरुद्वारा गुरू मांगट
१५. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई जवाहर सिंघ
१६. गुरुद्वारा पहिली पातशाही, बुरीयाना कलां
१७. गुरुद्वारा धर्मशाला मंडी
१८. गुरुद्वारा तीजी पातशाही, झाड़ी साहिब
१९. गुरुद्वारा भाई बहलोल जी, बलांवाला
२०. गुरुद्वारा भाई काहना जी
२१. गुरुद्वारा समाधी साहिब, महाराजा रणजीत सिंघ जी
२२. गुरुद्वारा पातशाही छेवीं, हुडिआरा पिंड
२३. गुरुद्वारा पातशाही छेवीं, पदाना
२४. गुरुद्वारा पातशाही छेवीं, ढिलवां पिंड
२५. गुरुद्वारा खविंडी पिंड
२६. गुरुद्वारा पातशाही छेवीं, रामपुर कलां
२७. गुरुद्वारा धर्मशाला, पठानके
२८. गुरुद्वारा साहिब कंगनपुर

२९. गुरुद्वारा पंजवीं पातशाही, जंबरकलां
३०. गुरुद्वारा भाई फेरू जी, सच्ची दाड़ी (जहां मोर्चा लगा था)
३१. गुरुद्वारा अकालीआं किला सरदार मान सिंघ
३२. गुरुद्वारा श्री गुरू अरजन देव जी, बहिड़वाल
३३. गुरुद्वारा कमास पिंड
३४. गुरुद्वारा गुरू मांगां
३५. गुरुद्वारा पहिली पातशाही, डेरा चाहल पिंड (जहां गुरु नानक साहिब जी के ननिहाल थे)
३६. गुरुद्वारा दमदमा साहिब, काछा पिंड
३७. गुरुद्वारा पहिली पातशाही, जाहमन पिंड

जिला गुजरांवाला

१. गुरुद्वारा समाधी साहिब, बाबा पतासा सिंघ
२. गुरुद्वारा गग्गे वाली
३. गुरुद्वारा धर्मशाल औलख
४. गुरुद्वारा भाई किशन सिंघ भंगवा
५. गुरुद्वारा भाई ईशवर सिंघ भाई मंगा पिंड भटीआ
६. गुरुद्वारा बुंगे वाला
७. गुरुद्वारा बाबा मूल सिंघ
८. गुरुद्वारा भाई रामा
९. गुरुद्वारा रोड़ी साहिब, ऐमनाबाद
१०. गुरुद्वारा चक्की साहिब, ऐमनाबाद
११. गुरुद्वारा खूही भाई लालो जी
१२. गुरुद्वारा धर्मशाला, मधुचौक
१३. गुरुद्वारा छेवीं पातशाही, वजीराबाद
१४. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई अभिनाशा सिंघ
१५. गुरुद्वारा धर्मशाला, भरोंकेचीमा
१६. गुरुद्वारा बचेको
१७. गुरुद्वारा पातशाही छेवीं, हाफजाबाद
१८. गुरुद्वारा समाधी साहिब भाई महा सिंघ
१९. गुरुद्वारा दमदमा साहिब बाबा साहिब सिंघ
२०. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई मूल सिंघ
२१. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई टेक सिंघ
२२. गुरुद्वारा डेरा बाबा पराना रामदास
२३. गुरुद्वारा पातशाही छेवीं, मट्टू भाईको
२४. गुरुद्वारा धर्मशाला धूपिया
२५. गुरुद्वारा धर्मशाला लूंबिया
२६. गुरुद्वारा समाधी भाई चढ़त सिंघ
२७. गुरुद्वारा धर्मशाला खालसा

जिला सिआलकोट

१. गुरुद्वारा ननकाणा साहिब, सीहोके
२. गुरुद्वारा कोनाल
३. गुरुद्वारा धर्मशाला पंचायती सतोके
४. गुरुद्वारा धर्मशाला सिक्खों सतारह
५. गुरुद्वारा पंचायती चेलोके
६. गुरुद्वारा बाबे की बेर
७. गुरुद्वारा शहीद बुंगा
८. गुरुद्वारा बाउली साहिब मूलदा उधार
९. गुरुद्वारा पातशाही छेवीं टाहली साहिब
१०. गुरुद्वारा दमदमा साहिब बाबा वीर सिंघ, कोट ढेंडू
११. गुरुद्वारा पनवाड़ा
१२. गुरुद्वारा पंचायती छिछरियां वाली
१३. गुरुद्वारा कोटकलाल
१४. गुरुद्वारा सीहोवाल
१५. गुरुद्वारा भाई सुंदर सिंघ बंगा
१६. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई गुरदित्त सिंघ
१७. गुरुद्वारा कोट मस्ता बाबा मीहा सिंघ
१८. गुरुद्वारा पंचायती माणक
१९. गुरुद्वारा धर्मशाला भगत राम नारोवाल
२०. गुरुद्वारा पंचायती
२१. गुरुद्वारा कच्ची धर्मशाला मुहदीपुर
२२. गुरुद्वारा नानकसर साहो वाला
२३. गुरुद्वारा पंचायती गीगेवाली
२४. गुरुद्वारा चंदोवाल
२५. गुरुद्वारा कच्ची धर्मशाला सनखतरा
२६. गुरुद्वारा पंचायती साहोवाल
२७. गुरुद्वारा गुरु हरिराय साहिब, गलोटियाखुर्द

जिला रावलपिंडी

१. गुरुद्वारा पातशाही छेवीं नडाली
२. गुरुद्वारा सिक्ख संगत थोहा खालसा
३. गुरुद्वारा झलारिया थोहा खालसा
४. गुरुद्वारा भाई भाग सिंघ कूरी
५. गुरुद्वारा पंचायती सिंघ सभा गुजरखान
६. गुरुद्वारा पंचायती पंज ग्राम
७. गुरुद्वारा माई सेवां थोहा खालसा
८. गुरुद्वारा पंचायती भाई महीआ सिंघ दौलताला
९. गुरुद्वारा पंचायती श्री गुरु सिंघ सभा सुखो
१०. गुरुद्वारा जगीरवाला थोहा खालसा

जिला लायलपुर

१. गुरुद्वारा भाई माला चक नं. ६५, मुकंदपुर गोगेरा ब्रांच
२. गुरुद्वारा प्रेम सती कमालिया
३. गुरुद्वारा माता जै कौर कमालिया

जिला मिंटगुमरी

१. गुरुद्वारा ननकाणा साहिब जगीर
२. गुरुद्वारा भाई सेवा सिंघ कबूला
३. गुरुद्वारा नानकसर डेरा बाबा नानक, चक नं. ११३८७ आर
४. गुरुद्वारा धर्मशाला हड़पा
५. गुरुद्वारा ननकाणा साहिब नानकसर
६. गुरुद्वारा पंचायती पक्का सुधार
७. गुरुद्वारा नानकसर टिब्बा अबोहर
८. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई सेवा सिंघ कादराबाद
९. गुरुद्वारा धर्मशाला पीर हयात
१०. गुरुद्वारा पहिली पातशाही दीपालपुर
११. गुरुद्वारा धर्मशाला सोडीवाला, मंडी हीरा सिंघ
१२. गुरुद्वारा दरबारो शाह पंचायती हुजरा

जिला शेखूपुरा

१. गुरुद्वारा ननकाणा साहिब, जन्म-स्थान श्री गुरु नानक देव जी
२. गुरुद्वारा बाल लीला साहिब
३. गुरुद्वारा पट्टी साहिब
४. गुरुद्वारा तंबू साहिब
५. गुरुद्वारा माल जी साहिब
६. गुरुद्वारा किआरा साहिब
७. गुरुद्वारा छेवीं पातशाही
८. गुरुद्वारा अकाल बुंगा साहिब, ननकाणा साहिब
९. गुरुद्वारा सच्चा सौदा साहिब, चूहड़काणा
१०. गुरुद्वारा नंगल सांधा
११. गुरुद्वारा हफ्त मदार
१२. गुरुद्वारा श्री गुरु अरजन देव जी, बावरे
१३. गुरुद्वारा श्री गुरु अरजन देव जी, पिंड जातरी
१४. गुरुद्वारा भाई गुरमुख दास, फरीदाबाद
१५. गुरुद्वारा धर्मशाला रामदास वाली

जिला अटक

१. गुरुद्वारा श्री पंजा साहिब, हसन अब्दाल
२. गुरुद्वारा श्री गुरु सिंघ, सभा तलागंग
३. गुरुद्वारा चश्मा साहिब धर्मशाला भाई लछमण सिंघ दमल
४. गुरुद्वारा कोट वाली थान सिंघ
५. गुरुद्वारा भाई दासूराम वाला पिंडी घेब
६. गुरुद्वारा पंचायती पिंडी घेब
७. गुरुद्वारा सिंघ सभा पिंडी घेब
८. गुरुद्वारा भाई निहाल सिंघ हसन अब्दाल

जिला गुजरात

१. गुरुद्वारा पातशाही छेवीं, गुजरात शहर
२. गुरुद्वारा धर्मशाला पंचायती, पुरानी कादराबाद
३. गुरुद्वारा दमदमा साहिब बाबा साहिब सिंघ, कादराबाद
४. गुरुद्वारा टिल्ले साहिब
५. गुरुद्वारा गुलीआना साहिब
६. गुरुद्वारा श्री करतारपुर सराय आलमगीर
७. गुरुद्वारा भाई बंनो जी मांगट
८. गुरुद्वारा धर्मशाला सिंघ सभा, मलकवाल
९. गुरुद्वारा बेर बाबा साहिब

जिला गुरदासपुर, तह. शकरगढ़

१. गुरुद्वारा बाबे की बेर मलां
२. गुरुद्वारा दरबार कोट नैणा
३. गुरुद्वारा धर्मशाला दोदां
४. गुरुद्वारा करतारपुर साहिब राबी

जिला जेहलम

१. गुरुद्वारा धर्मशाला बाहर वाली खुर्द
२. गुरुद्वारा तलाब साहिब भोंण
३. गुरुद्वारा डेरा बाबा काहन सिंघ, चकवाल
४. गुरुद्वारा बजार वाला, चकवाल
५. गुरुद्वारा बाबू नारायण सिंघ, जेहलम शहर
६. गुरुद्वारा चौहा साहिब, रोहतास
७. गुरुद्वारा भाई करम सिंघ, जेहलम

जिला झंग

१. गुरुद्वारा नानकसर साहिब
२. गुरुद्वारा भाई खानचंद वाला, मघीयाना

जिला शाहपुरा

१. गुरुद्वारा धर्मशाला खालसा कलां, साहीवाल
२. गुरुद्वारा धर्मशाला ब्लाक नं. ३, सरगोधा
३. गुरुद्वारा धर्मशाला ब्लाक नं. २, सरगोधा
४. गुरुद्वारा धर्मशाला ब्लाक नं. १०, सरगोधा
५. गुरुद्वारा झावरीआं साहिब
६. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई माहना सिंघ, फरूका
७. गुरुद्वारा उगाली साहिब
८. गुरुद्वारा भाई प्रेम सिंघ, नुशहरा
९. गुरुद्वारा भाई राम सिंघ, नुशहरा
१०. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई चरनदास मिट्ठा टिवाणा
११. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई भगत सिंघ भेरा
१२. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई गुलाब सिंघ निहंग, ब्लाक नं. १, भेरा
१३. गुरुद्वारा सिंघ सभा, भलवान
१४. गुरुद्वारा मिडरां झंग
१५. गुरुद्वारा धर्मशाला सिक्ख संगत, खुशाब
१६. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई लछमण दास अकलीआं, खुशाब
१७. गुरुद्वारा गुरुसर मान सेहरा, चक नं. १२७, एस. बी.

जिला मुलतान

१. गुरुद्वारा धर्मशाला भाई दयाला जी, मुलतान

जिला सूबा सरहद

१. गुरुद्वारा बाबा करम सिंघ, होती मरदान
२. गुरुद्वारा समाधी अकाली फूला सिंघ नुशहिरा
३. गुरुद्वारा भाई जोगा सिंघ, पिशावर
४. गुरुद्वारा भाई बीबा सिंघ, पिशावर

कविता

बेटी का सम्मान

सभी जगह बेटी का हो सम्मान।
पूरे करें उसके भी अरमान।
बेटी भी अपनी है संतान।
बेटी भी बेटे के समान।
कोई न रहे इस तथ्य से अनजान,
सभी परिवारों में पहुंचे ज्ञान।
मन से हो अच्छा लालन-पालन,
बेटी बने हमारी श्रेष्ठ शान!
सभी सुविधाएं बेटों ही जैसी,
न हो भेदभाव का नामो-निशान।
सत्य विचार लिखती यह कानी,*
करती न कभी गलत बखान।
गर्व करें, अपनी भी बेटी है,
हमारा बन जाए स्वाभिमान।
खत्म हो जाए कल की दूषित परंपरा,
जो बेटियों का करती रही अपमान।
सभी जगह बेटी का हो सम्मान।
यह भी है हमारा असल सम्मान।

**कलम।*

-डॉ. सुरिंदरपाल सिंघ, पत्तण वाली सड़क, पुराना शाला, जिला गुरदासपुर। मो. : ९४१७१-७५८४६

पंजाब प्रदेश के जन-समाज की सांगीतिक धार्मिक चेतना

*-श्रीमती नीलू**

पंजाब प्रदेश की धार्मिक स्थिति अत्यन्त सहिष्णु और उदार रही है। जब-जब धर्म की अवनति अपनी चरम सीमा पर पहुंच जाती है तब धर्म की स्थापना के लिए कोई महापुरुष अवतार धारण करता है।

वैदिककालीन पंजाब भारतीय आर्यों की संगीत विषयक उपलब्धियों का अध्ययन करने से पता चलता है कि उनका प्रथम आवासीय आंचल पंजाब ही था और यहीं से समस्त आर्य भारत में स्थापित हो गए। वैदिक काल से ही कंठ संगीत के अतिरिक्त वाद्य संगीत में वीणा, वंशी, मृदंग एवं डमरू आदि वाद्यों का विशेष प्रयोग किया जाता था, क्योंकि इन कलाओं के मूल में धार्मिक भावना विद्यमान थी। धीरे-धीरे वैदिक धर्म का लोप होता चला गया तथा अनेक मत-मतांतर पनपने लगे।

भारत में मुस्लिम धर्म के प्रवेश पर भारतीय हिंदुओं के सम्मुख धर्म का एक नया रूप प्रस्तुत हुआ। इस संप्रदाय के सूफी पीरों-फकीरों में सांप्रदायिकता नहीं थी। लोकवर्ग इन सभी मत-मतांतरों की कट्टरता, असहिष्णुता से संतुष्ट नहीं था। इसी असंतोष ने 'भक्ति आंदोलन' को जन्म दिया। पंजाब में इसको गुरमति के नाम से अधिक जाना जाता है, जिसके संचालक श्री गुरु नानक देव जी थे। श्री गुरु नानक देव जी के अवतरित होने के समय पंजाब-भूमि में धार्मिक मर्यादायें एवं सामाजिक व्यवस्था दोनों ही शोचनीय दशा में पहुंच गयी थीं। धर्म के क्षेत्र में आडंबर, वाह्याचार और ढोंग का बोलबाला था। समाज में 'माता' का पद ग्रहण करने वाली स्त्री जाति की दुर्दशा हो रही थी। ऐसे संकटग्रस्थ समय में ईश्वर के साथ एकरूप हुए श्री गुरु नानक देव जी पंजाब की पवित्र धरा पर अवतरित हुए। उन्होंने सिक्ख धर्म की नींव रखी। सभी लोगों ने इस भव्य धारा का बड़े उत्साह के साथ स्वागत किया।

श्री गुरु नानक देव जी द्वारा धार्मिक संगीत का उत्थान ही नहीं हुआ, बल्कि संगीतकारों को भी आदर की दृष्टि से देखा जाने लगा। इस काल में गाने-बजाने का कार्य अधिकतर 'मीरासी' जाति के लोग करते थे, जो समाज में नीची समझी जाने वाली जाति थी। इसी जाति से सम्बंध रखने वाले भाई मरदाना जी पर गुरु नानक साहिब जी की कृपा-दृष्टि पड़ी, जो गुरु जी के साथ देश-विदेश के भ्रमण के लिए निकल पड़े।

रबाब के सुरों पर गुरु जी और भाई मरदाना जी हरि-कीर्तन करते और श्रोताओं को आत्मविभोर कर देते। इस प्रकार राग और लय में बद्ध यह कीर्तन शीघ्र ही लोकप्रिय हो गया और राग-संगीत समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त करने लगा। गुरु जी द्वारा अंगीकार किये जाने पर सम्पूर्ण मीरासी जाति भी अत्यधिक अवहेलना तथा तिरस्कार से सम्मान की ओर कदम बढ़ाती दृष्टिगोचर होती है। समाज उन्हें सम्मान देने के लिए 'भाई मरदाना' कहने लगा।

गुरु जी का आदेश था कि कीर्तन का राग और लय सहित होना अनिवार्य है, क्योंकि इस प्रकार के कीर्तन में उच्च कोटि की स्थिति की

**147, Jawahar Nagar, Tehsil Camp, Panipat (Haryana).*

तन्मयता प्राप्त होती है।

मिरासियों द्वारा कीर्तन करने की प्रथा पांचवें गुरु श्री गुरु अरजन देव जी के समय तक चलती रही और एक विशेष घटना के फलस्वरूप मिरासियों के हाथ से कीर्तन करने का एकाधिकार क्षेत्र कुछ कम कर दिया गया। गुरु पातशाह जी का आदेश था कि अब उनके शिष्यगण भी कीर्तन कर सकते हैं।

इस परिवर्तन के मूल में जो घटना निरूपित की जाती है वो इस प्रकार है कि श्री गुरु अरजन देव जी के समय में भाई सत्ता और भाई बलवंड नाम के दो मीरासी कीर्तनकार थे जो परस्पर पिता-पुत्र थे या दोनों भाई-भाई थे। ऐसी दोनों प्रकार की ऐतिहासिक पुष्टि मिलती है। इनके परिवार में एक समय किसी कन्या के विवाह के अवसर पर इन्होंने गुरु जी से आर्थिक सहायता की याचना की। विशेष परिस्थितियों में उनकी इच्छानुसार अधिक धनराशि प्राप्त न होने के कारण वे गुरु-दरबार में कीर्तन करने में आना-कानी करने लगे। तभी से श्री गुरु अरजन देव जी ने संगत को स्वयं कीर्तन करने का आदेश दिया। इस प्रकार से सिक्ख समाज में स्वर और ताल की शिक्षा प्राप्त कर कीर्तन करने का उत्साह प्राप्त हुआ और राग संगीत की प्रतिष्ठा में और अधिक वृद्धि हुई।

इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि सिक्ख गुरु साहिबान व सूफी संतों ने पंजाब प्रदेश के जनमानस की धार्मिक एवं सामाजिक चेतना में नूतन ज्योति विकिरण की और वे रूढ़िगत विचारों के बोझ से मुक्त होकर प्रत्यक्षत: ईश्वरोन्मुख हो गये।

सहायक साहित्य सामग्री

१. पंज खालसा दीवना भसोड़ दी पंजाबी साहित्य नूं देन, डॉ. तेजवंत मान, प्रकाशक : लिटरेचर हाऊस, पुतलीघर, अमृतसर।

२. पंजाब की संगीत परंपरा, गीता पैन्तल, राधा पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।

३. सत्ते बलवंड की वार, प्रो. साहिब सिंघ।

कविता

सुस्वागतम्

सच्चा सुख पाने को आओ श्री हरिमंदर साहिब परिसर में।
पूज्य गुरु नानक सहित दस पातशाहों के गुरु-घर में।
धन्य श्री अमृतसर, जहां श्री वाहिगुरु निवास करे।
डाल कर निज कृपा-दृष्टि, पूर्ण मन की आस करे।
पूज्य श्री गुरु ग्रंथ साहिब के हजूर में माथा टेकिये।
जीने का सच्चा तरीका, आओ यहां से सीखिये।
शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी धन्य खुद को मानती।
श्री वाहिगुरु से करे विनती 'विश्व में हो शांति'।
शांति और सद्भाव पनपे, विश्व के प्राणियों में।
सबकी आस्था हो सुदृढ़ गुरु ग्रंथ साहिब की बाणियों में।
सिक्ख पंथ हो शिखर पर, सुख-शांति का परचम लिये!
खालसा श्री वाहिगुरु का, सत्य संग जीवन जिये।
हरिमंदर साहिब के दर्शन पाकर, खुद को आओ करें निहाल।
शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी आप से कहे 'सत् श्री अकाल'।

-श्री संजय बाजपेयी रोहितास, C/o जनाब हुसैनी मियां, स्टेशन रोड, कछौना (बालामऊ), जिला हरदोई (उ. प्र.)

माता-पिता का मान : यही हमारी पहचान

*-बीबी जसपाल कौर**

मनुष्य जन्म सबसे उत्तम माना गया है। हम लोग बड़े भाग्यशाली हैं कि हमें वाहिगुरु की कृपा से मानव-जन्म प्राप्त हुआ है। हम अपने इस अनमोल मानव जीवन को तभी सफल कर सकते हैं जब हम किरत करें, नाम जपें और बांट कर खायें। भाव यह है कि हम रचनात्मक कर्म करें, प्रभु का सिमरन करते हुए, प्रभु द्वारा बताये सुमार्ग पर चलें और समाज में सभी के साथ समानता का व्यवहार करते हुए मिल-जुल कर रहें।

मानव का सबसे बड़ा धर्म इंसानियत का धर्म है जो हमें यही सिखाता है कि हम एक दूसरे के दुख-सुख में हमेशा भागीदार बनें। हमें मनुष्य-जन्म देकर प्रभु ने हम पर बहुत बड़ा उपकार किया है। इसके साथ-साथ हम अपने माता-पिता के भी ऋणी हैं जो कि अनेक कष्ट सहकर हमारा लालन-पालन करते हैं, स्वयं रूखी-सूखी खाते हैं तथा हमें चुपड़ी खिलाते हैं, हमारे सारे नाज-नखरे पूरे करते हैं, सारी जरूरतें पूरी करते हैं। हमारे माता-पिता का यह ऋण हम सात जन्म तक भी नहीं चुका सकते।

वर्तमान के इस भौतिकवादी युग की चकाचौंध में हम लोग ऋण चुकाना तो दूर इस बात का अहसान भी नहीं मानते कि हमारे जीवन को सफल बनाने में प्रभु का, माता-पिता का एवं गुरु का हाथ है। आज व्यवसायिकता की इस दौड़ में हम इतने 'अंधे' हो चुके हैं कि हम सबको नजरंदाज करते जाते हैं और हमें जो नजर आता है वो है पैसा, पैसा, सिर्फ पैसा। जब हम इस व्यवसायिकता की दौड़ में बहुत दूर तक निकल जाते हैं और जब भगवान की बिना आवाज वाली लाठी की हमें मार पड़ती है तब हकीकत हमारे सामने आती है, लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी होती है।

कहा जाता है कि बालक को अपने माता-पिता का हमेशा ऋणी महसूस करते रहना चाहिये। बालक यह ऋण पूर्णतः कदापि नहीं चुका सकता। मां बालक को नौ महीने अपने गर्भ में रखती है, उसे अपने खून से सींचती है; बालक के जन्म के समय असहनीय प्रसव पीड़ा को भी हंसते-हंसते सहन करती है, तरह-तरह की मनौतियां मानती है, कभी उफ तक नहीं करती, क्योंकि उसे आने वाले बालक के अंदर अपना पूरा भविष्य नज़र आता है। उसी बालक के सहारे वह अपना पूरा जीवन-यापन करना चाहती है। अपना बालक उसे सबसे सुंदर नजर आता है। वो उसकी बलाएं लेती है। यहां मुझे एक कहानी याद आती है जो बहुत समय पहले मैंने पढ़ी थी। कहानी बड़ी शिक्षाप्रद है।

एक मालकिन ने अपनी नयी नौकरानी को कहा कि जाओ, मेरे बच्चे को स्कूल में खाना दे आओ। नौकरानी, चूंकि नयी-नयी पहले दिन ही उस घर में आयी थी, उसने कहा कि "बीबी जी! मैं आपके बच्चे को पहचानूंगी कैसे?" मालकिन बोली कि "तुम्हें जो सबसे खूबसूरत बच्चा नजर आये उसे यह खाना दे

**अध्यापिका, श्री गुरु नानक देव सी. से. स्कूल, आदर्श नगर, जयपुर-३०२००४, मो : ९४१३४-१८००४*

देना, क्योंकि मेरा बच्चा उस स्कूल का सबसे खूबसूरत बच्चा है।" नौकरानी ने टिफिन लिया और मालकिन के बच्चे को देने चली गयी। स्कूल में बहुत-से बच्चे खेल रहे थे। अब नौकरानी सबसे खूबसूरत बच्चा पहचानती कैसे? उसे उस स्कूल में जो खूबसूरत बच्चा नजर आया उसने उसे वह टिफिन दे दिया।

अगले दिन मालकिन ने नौकरानी को बहुत डांटा और कहा कि "तुमने कल मेरे बच्चे को टिफिन क्यों नहीं दिया? मेरा बच्चा भूखा रह गया। जाओ, मैं तुम्हें नौकरी से निकालती हूं।" नौकरानी ने गिड़गिड़ाते हुए कहा कि "बीबी जी! आप ही ने तो कहा था कि जो बच्चा सबसे खूबसूरत हो उसे यह टिफिन दे देना। जब मैं स्कूल पहुंची तो वहां बहुत सारे बच्चे खेल रहे थे और सभी बच्चे बहुत ही खूबसूरत थे। उन सभी खूबसूरत बच्चों में मुझे जो सबसे ज्यादा खूबसूरत लगा, उसे मैंने वह टिफिन दे दिया और वह बच्चा मेरा अपना बच्चा था।"

इस कहानी से यही सच्चाई प्रकट होती है कि हर मां अपने बच्चे को दुनिया का सबसे खूबसूरत बच्चा मानती है। वही बच्चा जब व्यवसायिकता एवं आधुनिकता की अंधी दौड़ में खो जाता है और माता-पिता का ख्याल रखना भूल जाता है तब वह उन्हें मानसिक एवं शारीरिक परेशानियां पहुंचाता है और उनके संजोये सपनों को चूर-चूर कर देता है। आजकल ऐसी खबरें पढ़ने-सुनने को अक्सर मिल जाती हैं। इतना सब कुछ होने के बाद मां का कलेजा टुकड़े-टुकड़े तो हो जाता है लेकिन अपनी सहनशीलता और अपने बालक की खुशी के कारण अपने चेहरे पर वह कोई शिकन नहीं आने देती।

मानव एक सामाजिक प्राणी है और इसी कारण मानव ने समाज की रचना की यानी मिल-जुल कर रहने की एवं समूह में रहने की प्रथा, जिसके कारण समाज का निर्माण हुआ। समाज का सबसे पहला पड़ाव है घर, जिसमें मात-पिता, भाई-बहिन, बेटा-बहू, पोते-पोतियां होते हैं, जो सभी मिल-जुल कर रहते हैं और इनके मिल-जुल कर रहने से ही एक सुंदर घर का निर्माण होता है, इसे संयुक्त परिवार कहा जाता है। घरों से मिल कर ही समाज का निर्माण होता है।

हर माता-पिता अपने बालक को अच्छे संस्कार देते हैं, उसके अच्छे भविष्य के लिए पाई-पाई जोड़कर, यहां तक कि ऋण लेकर उसकी अच्छी पढ़ाई के लिए उसे घर से दूर भेजते हैं। उसे पढ़ा-लिखा कर लायक बनाते हैं, फिर उसकी शादी रचा देते हैं ताकि बालक और उसकी बहू मिलकर उनके बुढ़ापे का सहारा बनें। लेकिन ज्यादातर होता उलट है। वर्तमान युग में वही बालक जब हर रूप में समर्थ हो जाता है तो एकल रहने में ज्यादा विश्वास रखता है। उसे लगता है कि अब वह बड़ा हो गया है तथा समझदार हो गया है। ऐसे में उसे रोक-टोक बिलकुल अच्छी नहीं लगती। माता-पिता को बुढ़ापे में अपने बालक की सबसे ज्यादा आवश्यकता होती है। बुढ़ापे के कारण वे बीमारियों से घिर कर शारीरिक रूप से अत्यधिक कमजोर और असहाय हो जाते हैं, ज्यादातर बालक बुढ़ापे का सहारा बनने की बजाय उनको छोड़कर अपनी पत्नी एवं बच्चों के साथ अलग रहने में ज्यादा विश्वास रखता है। बूढ़े माता-पिता असहाय होने के बाद भी उस बालक के लिए एक छत्र-छाया का काम करते हैं। जिस प्रकार छाता हमको धूप एवं बारिश से बचाता

है उसी प्रकार माता-पिता भी अपने बच्चों को सभी परेशानियों से बचाते हैं।

अंग्रेजी में एक बहुत सटीक कहावत है: "ओल्ड इज गोल्ड।" गुरबाणी में माता-पिता को परमात्मा के समान दर्जा दिया है : *"गुरदेव माता गुरदेव पिता गुरदेव सुआमी परमेसुरा ॥"* बुजुर्गों के पास अपने अनुभव होते हैं, एक अच्छी एवं सकारात्मक सोच होती है, फिर क्यों नहीं हम उनके अनुभवों एवं अच्छी सोच का लाभ उठाते? बालक अपनी स्वार्थी प्रवृत्ति तथा दुनिया की देखा-देखी एकल रहने में ज्यादा विश्वास रखते हैं, अपने बूढ़े माता-पिता को अकेला रहने पर मजबूर कर देते हैं और कई बार तो उन्हें वृद्ध आश्रम आदि में रहने की भी सलाह दे डालते हैं।

जब तक माता-पिता जीवित रहें तब तक हम उनकी ढंग से देखभाल नहीं करते, जरूरत के समय दवाई एवं खाना नहीं देते, मगर जब माता-पिता नहीं रहते तो दिखावे के लिए अखबार में बहुत बड़ा-सा फोटो उनकी मीठी याद में छपवाते हैं। हमारा यह फर्ज बनता है कि हम हरे-भरे पेड़ की सुरक्षा करें, उसका सही ढंग से लालन-पालन करें न कि दिखावटी सूखे पेड़ को पानी पिलायें या संजो कर रखें। कैसी विडम्बना है यह? आज हमारे बुजुर्गों को चाहिए घर का खुशनुमा व अनुशासित माहौल। इसके सिवा शायद उनकी कोई अभिलाषा भी नहीं होती। जितनी जरूरत हमारे माता-पिता को हमारी है उससे भी कहीं ज्यादा जरूरत हमें अपने माता-पिता की है। इस बात का अहसास हमें तब होता है जब हम उनकी कमी अनुभव करने लगते हैं या उन्हें खो चुके होते हैं।

हम सिक्ख हैं और सिक्खों की सबसे बड़ी पहचान है 'सेवा'। हम अपनी इस पहचान को दिखावटी न बनाकर इसकी शुरूआत अपने घरों से ही करें। अपने घर के बड़े बुजुर्गों का पूरा मान करें, उनके सुझाये मार्ग पर चलें, उनके द्वारा दिये गये संस्कारों का पालन करें। हमें जो संस्कार मिले हैं वे सहेज कर रखने के लिए नहीं हैं, संस्कारों को अमल में लाना ही असली कर्म है। संस्कार भविष्य के लिए बचा कर नहीं रखे जा सकते। अगर हम संस्कारों को वर्तमान में ही अमल में ले आयेंगे तभी ये संस्कार जीवन भर हमारे साथ चलेंगे और हमारे अनुज भी इसका पालन करेंगे। आज जैसा हम अपने बुजुर्गों के लिए करेंगे वैसा ही कल हमारे बच्चे भी हमारे साथ करेंगे, क्योंकि बच्चा वही सीखता है जो बड़े करते हैं। हम यह तो चाहते हैं कि हमारा बच्चा आज्ञाकारी हो, तो क्या हमारे माता-पिता नहीं चाहते कि उनका बच्चा यानि हम भी उनके लिए आज्ञाकारी हों? यह दुनिया "टिट फार टैट" यानि "जैसे को तैसा" की है और यह एक हकीकत भी है। आप जैसा करेंगे वैसा ही आपको प्राप्त होगा। आज नहीं तो कल या कुछ समय बाद मिलेगा जरूर।

वाहिगुरु इस संसार के प्रत्येक जीव में बसा है। माता-पिता की सेवा-सुश्रूषा से बढ़कर कोई दूसरी सेवा नहीं है। अगर सच्चे मन से माता-पिता की सेवा की जाये तभी हम परमात्मा की प्रसन्नता पा सकते हैं। ❁
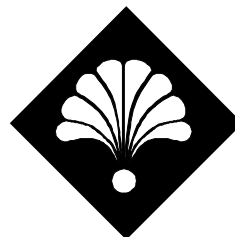
बुजुर्ग श्रेणी और वर्तमान समय

*-पवनीत कौर**

बुजुर्गों का स्थान हमारे देश में हमेशा ही पूजनीय रहा है। प्राचीन काल से ही बुजुर्गों का हमारे जीवन में बहुत अधिक महत्व रहा है, पर आजकल के समय में कुछ कम हो गया है। आजकल बच्चे बुजुर्गों को बोझ समझने लगे हैं। उनका आदर करना तो दूर उनसे ठीक ढंग से बात भी नहीं करते हैं। हम यह बात भूल जाते हैं कि उन्होंने ही हमें पाल-पोस कर बड़ा किया है।

बुजुर्गों का स्थान

जब लोग बुजुर्ग हो जाते हैं तो वे चाहते हैं कि उनके बच्चे उनका आदर करें, उनका ख्याल रखें, जैसा कि उन्होंने बचपन में उनका रखा था। वे केवल अपने बच्चों से यही चाहते हैं कि घर में उनका सम्मान बना रहे। बुजुर्गों का स्थान कोई अन्य नहीं ले सकता। बुजुर्गों का ख्याल तो एक छोटे-से बच्चे की तरह रखा जाना चाहिए, क्योंकि बुजुर्गावस्था में कमजोर होने के कारण वे अपना ध्यान अच्छी तरह से नहीं रख पाते हैं।

आधुनिक सोच

जैसे ही हमारा समाज आधुनिक होता जा रहा है हमारी सोच भी बदल रही है। हम बस, अकेला रहना ही पसंद करते हैं, जिस कारण हम बुजुर्गों को बोझ समझते हैं। आधुनिक सोच रख कर हम यह भूल जाते हैं कि उन्होंने ही हमें पाल-पोस कर बड़ा किया है। अगर हमारे माता-पिता भी ऐसी सोच रखते तो क्या आज हम अच्छे नागरिक बन पाते और क्या हम इस समाज में अच्छा मान-सम्मान पा सकते? हम इन बातों को नहीं सोचते हैं और अज्ञानतावश उल्टा-सीधा करते हैं। बुजुर्गों के मान-सम्मान में आ रही कमी के कई कारण हो सकते हैं। इनमें कुछ निम्नलिखित हैं:

महंगाई

बुजुर्गों के प्रति नकारात्मक व्यवहार का एक कारण महंगाई है। आजकल के लोग सोचते हैं कि अगर वे अपने साथ किसी अन्य को रखेंगे तो उन्हें उस व्यक्ति का खर्चा उठाना पड़ेगा, जिस कारण वे बुजुर्ग व्यक्ति को अपने साथ रखने के लिए तैयार नहीं होते। हम सोचते हैं कि अगर एक भी व्यक्ति और हमारे साथ रहेगा तो उसके खाने-पीने का खर्च, कपड़ों का खर्च तो हमें ही उठाना पड़ेगा। हम यह सोच कर बुजुर्ग माता-पिता को अकसर अपने साथ नहीं रखते हैं।

समय की कमी

आजकल के युग में सभी काम-धंधा करते हैं, चाहें वो औरत हो या आदमी। प्राय: हमारे पास इतना भी समय नहीं होता कि हम अपने

**पिता स. गुरजीत सिंघ, कक्षा १०, अजीत विद्यालय सी. से. स्कूल, सुलतानविंड रोड, श्री अमृतसर।*

बच्चों का ध्यान ठीक ढंग से रख सकें। यह बात सोचकर ही किसी भी बुजुर्ग माता या पिता को अपने साथ नहीं रखना चाहते। हम सोचते हैं कि हमारे पास अपने बच्चों का ध्यान रखने का समय नहीं है तो हम इनका ध्यान कैसे रखेंगे? समय की कमी भी आज के समय में बुजुर्गों का ध्यान न रखने का एक प्रमुख कारण बन रही है, जिसके कारण हमारे द्वारा जाने-अनजाने में बुजुर्गों का अपमान हो रहा है। हम उन्हें अपने पास रखने के लिए साफ-साफ मना कर देते हैं, यह कहकर कि हमारे पास उनका उचित ध्यान रखने के लिए समय नहीं है।

बात करने का ढंग

आज के समय में कई घरों में बच्चे अपने माता-पिता से भी अच्छी तरह बात नहीं करते, अपने दादा-दादी आदि से तो बात करने का ढंग मत ही पूछिए! वे उनसे खुलकर बात तक नहीं करते और उन्हें कुछ नहीं समझते हैं। वे पल-दो-पल के लिए भी उनसे अच्छी तरह बात नहीं करते हैं।

दूसरे घरों में भेजना

वे लोग जो अपने सम्मानयोग्य बुजुर्गों का ध्यान नहीं रख पाते वे उन्हें सरकार द्वारा बनाए गए वृद्ध-घरों या सामाजिक संगठनों द्वारा निर्मित वृद्ध-आश्रमों, सीनियर सिटीजन होम आदि में भेज देते हैं। आजकल तो जैसे इसका फैशन ही चल पड़ा है। हम यह नहीं सोचते कि यदि घर में उनके अपने उनकी सही देखभाल नहीं कर पाए तो पराई जगह से बेहतर देखभाल की उम्मीद कैसे करें? वृद्ध-आश्रम है तो बेसहारा वृद्धों के लिए मगर अच्छे-खासे घर-परिवार वाले भी परिवार की बेरुखी के कारण इसे अपने लिए एक सुविधा समझ कर इसका लाभ उठाने की कोशिश करते हैं।

आज के भौतिकवादी युग में पारिवारिक, सामाजिक व सांस्कृतिक संस्कार भले ही पीछे रहते जा रहे हैं, फिर भी हमें इन संस्कारों को यथावत कायम रखते हुए सर्वप्रथम अपना अमूल्य धन 'बुजुर्ग' प्रसन्न व खुशहाल रखने चाहिएं। उन्होंने बिना कोई अपना लाभ देखे हमारे लिए इतना कुछ किया होता है तो हमें भी उनका ध्यान अर्थात् ख्याल रखकर अपना फर्ज अदा करना चाहिए, उनकी बातों को सुनना और मानना चाहिए।

अकेला महसूस न करवाना

हमें कभी भी बुजुर्गों को यह नहीं महसूस करवाना चाहिए कि वे अकेले हैं। उनका साथ देना ही हमारा फर्ज है और यही हमारा उनके प्रति धर्म भी है। यह हमें पूरी ईमानदारी के साथ करना चाहिए। उनका आदर बिना किसी लालच की भावना से करना चाहिए। यह बात हमेशा याद रखनी चाहिए कि बुजुर्गों की सेवा करना ईश्वर की सेवा करने के बराबर है।

अंत में यही बात याद रखनी चाहिए कि बुजुर्गों की सेवा तन-मन से करनी चाहिए, उनका आदर करना चाहिए, उन्हें अपने ऊपर बोझ नहीं समझना चाहिए, क्योंकि वे भी हमें हमारे बचपन में यदि बोझ ही समझते तो आज हम भी इस संसार में नहीं होते और इस दुनिया के रंगों-नजारों का आनंद नहीं उठा पाते। ❁

निज के साथ मोह

मूल लेखक व लेखिका : एस. एन. गोइनका व राजिंदर कौर, पूना

हे मेरे मन! बता तो सही, वह कौन है जिसके व्यवहार से तू तिलमला उठा है तथा अभी तक तिलमिला रहा है? वह मेरा पुत्र है? पिता है? भाई है? सास है कि बहू है? अवश्य! अवश्य! इनमें से कोई एक तो होगा, इसी लिए तो तेरा गुस्सा अभी तक दूर नहीं हुआ, इसी लिए तो प्रेशर कूकर की तरह अभी तक तू भीतर ही भीतर कुलबुला रहा है।

वस्तुत: जो जितना ही नजदीक है उसका बुरा बर्ताव उतना ही कड़वा लगता है। कोई नजदीकी अपना न होकर, साधारण जान-पहचान वाला हो तो उसका बुरा व्यवहार शीघ्र ही भुला दिया जाता है और कोई बिलकुल ही परिचित न हो तो उसके बुरे व्यवहार को कोई विशेष महत्व नहीं दिया जाता, परंतु वैसा ही व्यवहार कोई गहरा मित्र करे या रिश्तेदार करे तो वह दिल को वर्षों तक जलाता रहता है और कभी-कभी तो जीवन भर दिल को दुखित करता रहता है।

कभी सोचा है कि ऐसा क्यों होता है? कभी समझा है कि विभिन्न व्यक्तियों की ओर से किया हुआ एक-सा बुरा व्यवहार तुझको कम या अधिक दुखदायी क्यों लगता है? जरा ध्यान देकर देखें तो सच्चाई स्पष्ट दीखने लग पड़ेगी।

जिसको तूने अपना मान रखा है, उसके आंख बदलते ही इतना व्याकुल हो उठता है! जिसको अपना कभी नहीं माना, उसकी निगाहें फिरते ही, दुख हो भी तो इतनी गहराई में नहीं जाता और इतनी देर तक टिकता भी नहीं, इसलिए दुख केवल गहरे बुरे व्यवहार के कारण नहीं है। गहरा दुख, बुरे व्यवहार करने वाले व्यक्ति के साथ तेरे अपनेपन के भाव के कारण है।

जिसको तूने अपना मान लिया, उससे यह उम्मीद करने लग पड़ा कि उसका व्यवहार तुम्हारी इच्छा के अनुरूप होना चाहिए। तुम्हारी इच्छा के अनुरूप नहीं हो रहा तो वह कैसे तुम्हारा अपना हुआ? अत: जहां किसी अपने का अपनेपन का भाव (भ्रम) टूटने लगा, वहां तुम्हारा दुख बढ़ने लगा, क्योंकि जिसको तूने अपना माना उसके प्रति अनेकों सपने भी संजोये। उस अपनेपन के भाव के टूटने से वे सपने भी तो टूटे।

यह मेरा पुत्र है, इसका पालन-पोषण करके इसको इतना बड़ा किया है, पढ़ाया-लिखाया है, काम-धंधा भी सिखाया है और अब कमाने के योग्य भी बना दिया है और यह सब इसलिए कि जब मैं बूढ़ा हो जाऊंगा, अपंग हो जाऊंगा, दुर्बल हो जाऊंगा, तब यह मेरी देखभाल करेगा, सेवा करेगा, मेरा कहना मानेगा और मेरी इच्छाओं की पूर्ति करेगा। अब उस मोहक सपने को एकदम करारी ठेस लगी। अपने पैरों पर खड़े होते ही, अब वह पुत्र मेरी परवाह नहीं करता, उसको अब मेरी जरूरत नहीं, इसलिए वह मेरा निरादर करता है, मेरे सपनों का महल चकना-चूर हो गया है।

जो-जो व्यक्ति इन सपनों को पूरा करने में तेरे साथ हैं वही तुझे प्रिय हैं, जो-जो अवरोधक हैं वे अप्रिय हैं। जब-जब वे साथ देते हैं तब-तब वे प्रिय हैं। जब-जब वे विरोध करते हैं वे अप्रिय हैं। जब कोई तेरे सपनों के मुताबिक चलता है तब वह तेरा पिता न होकर भी तुझे

पिता की तरह पूज्य लगता है; भाई न होकर भी भाइयों जैसा लगता है, उसकी हरेक बात तुझे सुहावनी लगती है, उसका हरेक बोल तेरे कानों में मिशरी घोलता है, परंतु यदि कोई तेरे सपनों के विपरीत कुछ करने लगे और फिर वह पिता हो तो भी वैरी की तरह लगने लग जाता है, भाई होकर भी विष की भांति खटकता है, उसका हरेक बोल तेरे दिल में विषैले तीर की भांति चुभता है।

जिन-जिन व्यक्तियों के सपने तेरे सपनों के साथ तालमेल खाते हैं, जिन-जिन व्यक्तियों की आशाएं तथा उम्मीदें तेरी आशाओं तथा उम्मीदों के मुताबिक चलती हैं, वे व्यक्ति तुझको बहुत प्रिय लगते हैं, जिन-जिन के सपने तेरे सपनों के साथ टकराने लगे, जिनके सपने तेरे सपनों के साथ मेल नहीं खाते, जिनकी आशाएं तथा उम्मीदें तेरी आशाओं तथा उम्मीदों के विपरीत जाने लगीं, वे तुझे कड़वे लगने लग पड़े।

तू किसी अनजान व्यक्ति के साथ कभी अपने सपनों का तालमेल नहीं होने देता। जितने भी तेरे निकट हैं या गहरे रिश्तेदार हैं उनके साथ ही तू अपने भविष्य के सपनों के संबंध जोड़ता है। जब वो सपने टूटते हैं तो बहुत खारे लगते हैं। उनका ही बर्ताव अप्रिय लगने लग जाता है, उनके ही बोल तुझको काटने को दौड़ते हैं।

तू चाहता है कि सभी तेरे साथ मुस्करा कर बात करें, क्योंकि जब कोई मुस्करा कर तेरे साथ बात करता है तो वह तुझको अच्छा लगता है। तू चाहता है कि कोई तेरा त्रिस्कार न करे क्योंकि त्रिस्कार तुझे अच्छा नहीं लगता, परंतु तू यह क्यों नहीं समझता कि कल तक जो तुझे प्यार करता था, तेरा त्रिस्कार नहीं करता था, वह एकदम बदल क्यों गया? साफ है कि उसको ज्ञात हो गया कि अब तू भीतर ही भीतर से उसके सपनों की जड़ें उखाड़ने लग गया है, तू अपने सपने पूरे करने के लिए उसके सपनों को चोट पहुंचाने लग गया है।

हरेक इंसान के अपने सपने होते हैं और हरेक को अपने सपनों के साथ लगाव होता है। ऐसी स्थिति में अपने सपनों के मोहवश हुआ यदि तुझसे मुंह न मोड़ लेगा तो और क्या करेगा?

तू अपनी तरफ देख। तू जब भी किसी को अपने सपनों के विरुद्ध जाते हुए देखता है तो कैसे उसके प्रति घृणा से भर जाता है, उस व्यक्ति के साथ अपने सारे प्यार के संबंध तोड़ लेता है, उसके साथ कड़वे वचन बोलने लग पड़ता है, उसका त्रिस्कार करने लग पड़ता है। यदि कोई तेरे साथ ऐसा करे तो कौन-सी हैरानी वाली बात है?

समझ, मेरे भोले मन! जो तेरी स्थिति है वही सबके मन की स्थिति है। जैसे तुझको अपने सपने प्रिय हैं, उसी प्रकार ही सबको उनके सपने प्रिय हैं। जिस तरह तुझको अपनी इच्छाओं को पूरी करने के बिना अन्य कुछ नहीं सूझता उसी प्रकार ही दूसरों का हाल है। सभी के सभी ही एक जैसी अग्नि की लपटों में जल रहे हैं।

समझ, इस स्वभाव के सही रहस्य को समझ। पहले तो तूने भविष्य के प्रति सुनहरी उम्मीदें रच लीं और इन सपनों के साथ गहरा मोह पैदा किया तथा इन सपनों की पूर्ति में अपने भविष्य की सुरक्षा मान ली कि मेरे ये सपने पूरे न हुए तो मेरा क्या होगा? इस भय तथा चिंता के कारण अपने आने वाले कल के प्रति चिंतित तथा भयभीत रहने लग पड़ा। असुरक्षा की स्थिति में, अपने किसी नजदीक वाले व्यक्ति को अपनी सुरक्षा के केंद्र के रूप में देखने लग गया। उसके साथ तेरे सारे संबंध इसी सुरक्षा को लेकर ही बने। जो जितना ही नजदीकी है वह तेरे लिए अपनी सुरक्षा का

उतना ही मजबूत गढ़ बन गया। जब कभी वह गढ़ टूटता दिखाई दिया तो तू बेहद व्याकुल हो गया। अपरिचित लोगों के प्रति तेरे भविष्य के संबंध में कभी कोई उम्मीद जागी ही नहीं। उनके अनचाहे व्यवहार ने तुझे कभी इतना दुखित नहीं किया परंतु जिनके प्रति अपने भविष्य के बारे में तूने आशाएं बांध लीं, उनको बदलते देखकर तू इतना व्याकुल हो गया? इसी लिए कहता हूं, जिनके कटु बोलों ने तुझको इतना व्याकुल कर रखा है वह अवश्य तेरा कोई करीबी है, उससे तेरे मन ने बड़ी-बड़ी आशाएं लगाकर रखी थीं, तू उनको अपने सपनों की पूर्ति का साधन जानता था। उन्होंने तेरे अनचाहे व्यवहार से तेरी सारी उम्मीदों पर पानी फेर दिया। यही मुख्य कारण है तेरी बेचैनी का।

इसी लिए हे मेरे अबोध मन! अपनी बेचैनियों से मुक्ति पाने के लिए, इन बेचैनियों के ऊपरी कारणों के साथ उलझना छोड़कर मूल कारण को समझ कर उसको दूर करना सीख। यह जो तूने अपने आप के साथ इतना मोह पैदा कर लिया है, अपने सपनों के साथ इतना लगाव पैदा किया है, अपने सपनों को लेकर जो तूने अपने नजदीकी रिश्तेदारों के साथ मोह पैदा कर लिया है, वो न कर। किसी भ्रम वाले मैं के प्रति पैदा किया मोह, किसी कल्पित सपने के साथ मोह, किसी मिटते हुए व्यक्ति के प्रति तेरा मोह बेचैनी ही पैदा करने वाला है। किसी की तरफ साधारण-सी नजरों के साथ देख-देख कर, उसके सहारे, सुनहरे सपने संजोने की यह दुख-जननी आदत छोड़। ये सपने कभी पूरे नहीं हुआ करते। कभी कोई सपना पूरा हो भी जाए तो अनेकों और सपने पैदा होने लगते हैं। तांता लग जाता है इन आशा भरे सपनों का और जब कोई एक भी सपना पूरा नहीं होता या पूरा होकर नष्ट हो जाता है तो बहुत दुख होता है और रास्ते में जो भी व्यक्ति उसका प्रत्यक्ष कारण बनता है वही शत्रु जैसा प्रतीत होने लग पड़ता है। इस सच्चाई को समझते हुए, अपने किसी भी सगे-संबंधियों के साथ नाराज होने की बजाय अपनी कल्पित आशाओं के मोह में से बाहर निकल।

स्रोत : पंजाबी भाषायी आलेख
संत सिपाही (मासिक), जुलाई २०१०
हिंदी अनुवाद : सुरिंदर सिंघ निमाणा
सहायक संपादक

Quantity की जगह Quality पर ज्यादा ध्यान दिया जाए!

'गुरमति ज्ञान' की लोकप्रियता का निरंतर बढ़ रहा ग्राफ 'गुरमति ज्ञान' के लेखक भाइयों-बहिनों के परिश्रम का ही फल है। हम अपने कुछ लेखक भाइयों-बहिनों से एक छोटी-सी विनती करते हैं कि वे अपनी रचनाओं में नवीनता का तत्व न गायब होने दें। तथ्यों पर आधारित, मौलिक तथा अप्रकाशित रचनाएं पत्रिका के विकास का 'इंजन' हुआ करती हैं तथा समाज में नई चेतना पैदा करती हैं। पूर्व प्रकाशित किसी रचना को ही सामने रखकर नई रचना लिख देना केवल पाठकों को ही निराश नहीं करता बल्कि ऐसा करने से तो पाठक वर्ग के मन-मस्तिष्क में उस लेखक के प्रति सम्मान की न्यूनता भी होने लगती है। कृप्या मात्रा (Quantity) की जगह गुणों (Quality) पर ज्यादा ध्यान दिया जाए। *-संपादक।*

गुरबाणी राग परिचय : ३१

रागोपरांत बाणी - सवैया खंड

*-स. कुलदीप सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में राग उपरांत बाणी के तीन खंड हैं, जिनमें प्रथम और तृतीय खंड में सलोक हैं। सलोकों के खंडों के मध्य में २५ पन्नों में (१३८५-१४०९) सवैये हैं। सवैयों में पहले पांच पन्नों में श्री गुरु अरजन देव जी के २० सवैये दो भागों में हैं जिन पर "सवैये स्री सुख वाक" अंकित है। उनके बाद २० पन्नों में ११ भट्टों के १२३ सवैये हैं। इस प्रकार इस खंड में कुल सवैये (छंदों) की संख्या १४३ है जिनमें तीन सोरठा तथा शेष सवैया या छप्पय छंद हैं।

श्री गुरु अरजन देव जी के सवैयों को एक इकाई मान कर सवैया बाणी के छ: भाग हैं। प्रथम भाग श्री गुरु अरजन देव जी की निर्गुण प्रभु की आराधना से आरंभ होता है:

आदि पुरख करतार करण कारण प्रभु सभ आपे ॥
सरब रहिओ भरपूरि सगल घट रहिओ बिआपे ॥
(पन्ना १३८५)

भट्ट-बाणी के पांच भाग पांच गुरु साहिबान की प्रशस्ति में हैं। इन सभी का आरंभ भट्ट कलसहार के द्वारा निर्गुण प्रभु 'इक पुरखु' सोई पुरखु के स्मरण अथवा ध्यान से होता है:

--इक मनि पुरखु धिआइ बरदाता ॥
संत सहारु सदा बिखिआता ॥ (पन्ना १३८९)
--सोई पुरखु धंनु करता कारण करतारु करण समरथो ॥ (पन्ना १३९१)
--सोई पुरखु सिवरि साचा जा का इकु नामु अछलु संसारे ॥ (पन्ना १३९२)
--इक मनि पुरखु निरंजनु धिआवउ ॥
गुर प्रसादि हरि गुण सद गावउ ॥ (पन्ना १३९६)
--सिमरं सोई पुरखु अचलु अबिनासी ॥
जिसु सिमरत दुरमति मलु नासी ॥ (पन्ना १४०६)

श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा रचित सवैयों के प्रथम भाग में ९ सवैये हैं। प्रथम चार छंदों की रचना की एक शैली है। निराकार प्रभु के स्वरूप का कौन विचार कर सकता है? प्रभु से अभेद हुए भक्त के गुणों का वर्णन भी एक जिह्वा से संभव नहीं है। प्रभु के गुणों पर बलिहार ही हुआ जा सकता है। प्रथम छंद के बाद अगले तीन छंदों में प्रत्येक पंक्ति के अंदर तुकांत की ध्वनि है जिससे संगीत की नादमयी ध्वनि है- तुम्हारे घर अमृत का प्रवाह है, अतुल भंडाल भरे हैं, जो अलभ्य पदार्थों से भरे हैं:

अम्रितु प्रवाह सरि अतुल भंडार भरि परे ही ते परे अपर अपारि परि ॥ (पन्ना १३८५)

प्रथम भाग में छंद क्रमांक ५ से ९ छप्पय छंद हैं। अंतिम छंद में कलियुग में गुर प्रसादि व नाम-साधना से प्रभु-प्राप्ति का वर्णन है:

बलिओ चरागु अंध्यार महि सभ कलि उधरी इक नाम धरम ॥
प्रगटु सगल हरि भवन महि जनु नानकु गुरु पारब्रहम ॥ (पन्ना १३८७)

श्री गुरु अरजन देव जी के सवैया भाग २ में ११ छंदों में प्रथम ९ में सवैया शैली के रूप को अपनाया गया है। पंक्ति संख्या छ: से आठ है। छंद संख्या ५ में ८ पंक्तियों से दो सवैया छंदों का योग है।

**C-१२७, गुरु तेग बहादर नगर, इलाहाबाद-२११०१६*

देह, घर, प्यार आदि चीजें स्थायी नहीं हैं। माया में उन्मत्त हुए आखिर कब तक गर्व करते रहोगे? (पंक्ति १) मित्र, पुत्र, पत्नी, सज्जन, बंधुओं आदि का सुख वृक्ष की छाया की तरह विलीन हो जायेगा। पूर्ण पुरुष दीन दयाल प्रभु अगम अपार है, प्रति क्षण उसका सिमरन करो--हे श्रीपति! मैं तुम्हारी शरण में हूं, कृपा करके मेरा उद्धार करो। (पंक्ति ६-८)

देह न गेह न नेह न नीता माइआ मत कहा लउ गारहु ॥ . . .
मित्र न पुत्र कलत्र साजन सख उलटत जात बिरख की छांरहु ॥
दीन दयाल पुरख प्रभ पूरन छिन छिन सिमरहु अगम अपारहु ॥
स्रीपति नाथ सरणि नानक जन हे भगवंत क्रिपा करि तारहु ॥ (पन्ना १३८८)

विषय-परिवर्तन के साथ छंद-संख्या १० में हरि-नाम-खड़ग के अद्भुत गुणों का वर्णन नवीन शैली में है। हरि-नाम अक्षर है। वह सभी रोगों, दोष, मोह, पाप को भेदन कर देता है, किन्तु अन्य किसी वस्तु से उसे काटा नहीं जा सकता, बांधा नहीं जा सकता। उसे न अग्नि जला सकती है, न जल डुबो सकता है। प्रभु के प्रेम-रस में अनुरक्त जीव की दशा का कथन छंद की लय से ध्वनित है :

आवध कटिओ न जात प्रेम रस चरन कमल संगि ॥
दावनि बंधिओ न जात बिधे मन दरस मगि ॥
पावक जरिओ न जात रहिओ जन धूरि लगि ॥
नीरु न साकसि बोरि चलहि हरि पंथि पगि ॥
नानक रोग दोख अघ मोह छिदे हरि नाम खगि ॥ (पन्ना १३८९)

नाम खड़ग के विपरीत अन्य साधनों को अपनाना व्यर्थ है। इसी संदेश के साथ सवैयों के दूसरे भाग का समापन होता है।

श्री गुरु अरजन देव जी के सवैयों के बाद सवैया खंड का भट्ट-बाणी का क्रम आरंभ होता है। भट्ट-बाणी में ११ भट्टों के १२३ सवैये हैं। भट्टों के सामान्य परिचय के विषय में कहा जाता है कि भागीरथ नामक एक विद्वान कवि हुए हैं जिनकी नौवीं पीढ़ी में रैया नामक सज्जन थे जो रैया भट्ट कहलाते थे। वे अपने पुत्रों सहित गोइंदवाल आये। उनके पुत्र भिखा जी के दो सवैये उपलब्ध हैं। भिखा जी ने गोइंदवाल आने और सिक्ख धर्म अपनाने का वर्णन किया है:

रहिओ संत हउ टोलि साध बहुतेरे डिठे ॥
संनिआसी तपसीअह मुखहु ए पंडित मिठे ॥
बरसु एकु हउ फिरिओ किनै नहु परचउ लायउ ॥
कहतिअह कहती सुणी रहत को खुसी न आयउ ॥
हरि नामु छोडि दूजै लगे तिन्ह के गुण हउ किआ कहउ ॥
गुरु दयि मिलायउ भिखिआ जिव तू रखहि तिव रहउ ॥ (पन्ना १३९५-९६)

भट्ट भिखा श्री गुरु अमरदास जी के पास उपस्थित हुए। भट्ट भिखा जी के चार पुत्र थे--कल, जालप, कीरत और मथरा। कल अथवा कलसहार भट्टों में प्रमुख थे। कलसहार ने प्रथम पांच गुरु साहिबान की स्तुति की है। उनके ५४ सवैया छंद हैं जिनमें गुरु नानक साहिब एवं श्री गुरु अंगद देव जी के विषय में केवल उन्हीं के सवैये हैं। जालप जी के पांच सवैये श्री गुरु अमरदास जी के विषय में, कीरत जी के ८ सवैये श्री गुरु अमरदास जी और श्री गुरु रामदास जी के विषय में तथा मथरा जी के १४ सवैये श्री गुरु रामदास जी और श्री गुरु अरजन देव जी के विषय में हैं। इस प्रकार भिखा जी तथा उनके पुत्रों का सवैया खंड में १२३ में ८३ सवैयों का योगदान है।

कलसहार जी श्री गुरु नानक देव जी

स्तुति में गुरु विचारधारा को 'राजु जोगु' (राज-योग) की संज्ञा दी है। कर्मों को छोड़ देना सांख्य कहलाता है, कर्मों को भस्म करके ज्ञान करना ज्ञान-योग है। कर्म करते हुए नाम-साधना से सुरति को प्रभु में लीन रखना राज-योग है। राज-योग स्थिति से ही सहज अवस्था मिलती है। कलसहार जी ने अपने सवैयों में दोनों का उल्लेख किया है :

कबि कल सुजसु गावउ गुर नानक राजु जोगु जिनि माणिओ ॥ (सवैया २,३,४,५, पन्ना १३८९-९०)
जपु कल सुजसु नानक गुर सहजु जोगु जिनि माणिओ ॥ (सवैया ९, पन्ना १३९०)

राज-योग को अपना कर प्रभु में निवास करके समरस रहने और नाम-साधना से भवसागर पार करने के उल्लेख से राज-योग की धारणा को स्पष्ट किया गया है :

राजु जोगु माणिओ बसिओ निरवैरु रिदंतरि ॥
स्रिसटि सगल उधरी नामि ले तरिओ निरंतरि ॥
(पन्ना १३९०)

कलसहार जी के अनुसार श्री गुरु नानक देव जी की तरह श्री गुरु अंगद देव जी भी राज-योग करने वाले हैं। श्री गुरु अंगद देव जी की कीर्ति का आधार गुरु नानक साहिब के चरण-स्पर्श पद-चिन्हों पर चलने से है। श्री गुरु अंगद देव जी की प्रशस्ति में अंतिम दो सवैयों में कलसहार जी के मार्मिक उद्गार हैं। श्री गुरु अंगद देव जी के लिए सत्य ही तीर्थ है, सत्य ही स्नान है। उनका भोजन भी सत्य है, उनकी बाणी सत्य-स्वरूप प्रभु-नाम-उच्चारण से शोभायमान है। ऐसे गुरु के दर्शन से हमारा जीवन, हमारा जन्म सफल हो जाता है।

गुरु का मूर्तिमान स्वरूप गुरबाणी है। श्री गुरु अंगद देव जी की अमृतमयी दृष्टि सबका कल्याण करती है, सभी पापों को दूर करती है, विकारों को वश में करती है। इससे संसार का दुख दूर होता है। गुरु का दर्शन ९ निद्धियों का भंडार है जो सरिता के समान उपदेश-जल से हमारी कालिमा को दूर करता है। भट्ट कलसहार अपने उपनाम 'टल' से रचित इस छप्पय में आह्वान करते हैं कि सहज रूप से रात-दिन गुरु का दर्शन करना चाहिए जिससे जन्म-मरण के दुख से छुटकारा होगा:

सु कहु टल गुरु सेवीऐ अहिनिसि सहजि सुभाइ ॥
दरसनि परसिऐ गुरू कै जनम मरण दुखु जाइ ॥
(पन्ना १३९२)

श्री गुरु नानक देव जी के नाम-साधना के राज-योग तथा श्री गुरु अंगद देव जी के प्रथम गुरु के पथ-अनुसरण के बाद श्री गुरु अमरदास जी के हृदय में हरि-नाम का स्फुरण हुआ है। यह हरि-नाम भक्तों को पार लगाने वाला है :

सोई नामु अछलु भगतह भव तारणु अमरदास गुर कउ फुरिआ ॥ (पन्ना १३९३)

सत्य और नाम प्रभु के पर्याय हैं। नाम ही स्नान है, नाम ही सरस खानपान है और नाम-रस ही उनका मुख्य चाव है। श्री गुरु अमरदास जी ने श्री गुरु अंगद देव जी की सेवा करके अगम गति को पहचान लिया है।

श्री गुरु अमरदास जी की प्रशस्ति के कुल २२ सवैये हैं। कलसहार जी के सवैयों के बाद उनके भाई जालप के पांच सवैये हैं। भट्ट जालप जी ने श्री गुरु अमरदास जी की प्रभु की अद्वैत धारणा का वर्णन किया है। राग आसा में श्री गुरु अमरदास जी ने एक प्रभु में निष्ठा का वर्णन किया है :

मूलि लागे से जन परवाणु ॥
अनदिनु राम नामु जपि हिरदै गुर सबदी हरि एको जाणु ॥ (पन्ना ३६२)

द्वैत से दुख होता है। दूसरे को मानने वाले विष्टा के कीड़े हैं। मूल को छोड़कर डाली

में लगना व्यर्थ है।

जालप जी ने उस एक प्रभु के सिद्धांत की व्याख्या की है कि एक से अनेक होकर भी प्रभु अलख है। उसी ੧ੴ (एक ओअंकार) प्रभु का वर्णन श्री गुरु अमरदास जी ने किया है:

इकहु जि लाखु लखहु अलखु है इकु इकु करि वरनिअउ ॥
गुर अमरदास जालपु भणै तू इकु लोड़हि इकु मंनिअउ ॥ (पन्ना १३९४)

श्री गुरु अमरदास जी की प्रशस्ति में कलसहार जी और जालप जी के बाद भट्ट भिखा जी के तीसरे पुत्र कीरत जी के चार सवैया छंद हैं। प्रभु से मिलाने वाला सतिगुरु साधक की निष्ठा में प्रभु-रूप ही हो जाता है, साधक के पूर्व-लिखित कर्म-फल मिट कर नया समर्थन मिलता है जिससे वह प्रभु-सेवा में लीन होता है। गुरु की कल्याणमयी दृष्टि से नाम-रूपी मेवा मिलता है। जो गुरु की आज्ञा होती है मैं वही करता हूं। हे सृष्टि के कारण रूप प्रभु! जैसे तुम रखते हो मैं वैसे ही रहता हूं।

भट्ट कीरत जी के बाद भट्ट भिखा जी के सवैयों का उल्लेख किया जा चुका है। श्री गुरु अमरदास जी की प्रशस्ति में अंतिम दो सवैये भट्ट सलह और भट्ट भलह के हैं जो भट्ट भिखा जी के भाई सोखा जी के पुत्र थे। ये दोनों सवैये काव्य सौन्दर्य की दृष्टि से अलंकारपूर्ण हैं। कवि सलह ने दर्शाया है कि भाई तेजभान के सपुत्र श्री गुरु अमरदास जी किस प्रकार विकारों को युद्ध में हराकर चक्रवर्ती राजा हो गये हैं।

कवि भलह ने श्री गुरु अमरदास जी के गुणों की संख्या जानने के लिए प्रकृति के कई उपमानों की खोज की। बसंत के सुंदर फूल, वसुधा के हरित तृण और मेघों की वर्षा-बूंदों की गणना नहीं की जा सकती। सूर्य की किरणें, चंद्रमा की कांति, सागर की तरंगों की सीमा नहीं है, किन्तु इनकी गणना कवि शिव के ध्यान और गुरु के ज्ञान से कर सकते हैं। गुरु जी के गुणों की तुलना के लिए दूसरा उपमान नहीं है। गुरु के गुणों का सदृश्य गुरु के गुण ही हैं। इसे अन्वयोपमा अलंकार कहा जाता है :

घनहर बूंद बसुअ रोमावलि कुसम बसंत गनंत न आवै ॥
रवि ससि किरणि उदरु सागर को गंग तरंग अंतु को पावै ॥
रुद्र धिआन गिआन सतिगुर के कबि जन भल्य उनह जुो गावै ॥
भले अमरदास गुण तेरे तेरी उपमा तोहि बनि आवै ॥ (पन्ना १३९६)

श्री गुरु रामदास जी की स्तुति में ६० सवैयों का अंकन है जो कुल भट्टों के सवैयों का लगभग आधा भाग है। ११ भट्ट साहिबान में से सात भट्टों ने श्री गुरु रामदास जी की प्रशस्ति की है जिनमें से भट्ट नल जी, भट्ट गयंद जी तथा भट्ट वलह जी के सवैये केवल श्री गुरु रामदास जी की प्रशस्ति में हैं। सवैयों के क्रम के अनुसार पहले भिखा जी के पुत्र कलसहार जी के सवैये हैं, फिर चार नये भट्टों के सवैये हैं। वर्ग ३ में कीरत जी और मथरा जी के सवैये हैं :

वर्ग एक	:	कलसहार	=	१३
वर्ग दो	:	नल	=	१६
		गयंद	=	१३
		मथरा	=	७
		बल	=	५
वर्ग तीन	:	कीरत	=	४
		सल	=	२

श्री गुरु रामदास जी ने 'अमृत सर' को गुरबाणी और हरि-नाम के मूर्तिमान स्वरूप में सतसंग का केन्द्र स्थापित किया। भट्ट कलसहार जी ने हरि-नाम से रहित हृदयों को हरि-नाम

से पूर्ण करने के विचार को श्री गुरु रामदास जी की प्रशस्ति का मुख्य आधार बनाया है:

कवि कल्य ठकुर हरदास तने गुर रामदास सर अभर भरे ॥ (पन्ना १३९६)

श्री गुरु रामदास जी का मिलन श्री गुरु अमरदास जी से पूर्व जन्म के प्रेम और भक्ति-भाव के कारण हुआ। कलसहार जी ने इस घटना का उल्लेख संकेत रूप में किया है। मिलन के बाद की स्थिति के लिए कलसहार जी ने सद्‌गुणों के रूप में माता-पिता का उल्लेख राग गउड़ी में श्री गुरु नानक देव जी के एक शबद की पंक्ति से किया है :

प्रेम भगति परवाह प्रीति पुबली न हुटइ ॥
सतिगुर सबदु अथाहु अमिअ धारा रसु गुटइ ॥
मति माता संतोखु पिता सरि सहज समायउ ॥
आजोनी संभविअउ जगतु गुर बचनि तरायउ ॥
(सवैया ९, पन्ना १३९७)

श्री गुरु रामदास जी के सम्बंध में अंकित सवैयों में क्रमांक २ पर भट्‌ट नल के १६ सवैये हैं। भट्‌ट नल जी ने गुरु के नाम-जप की महत्ता पर प्रकाश डाला है। भट्‌ट नल जी के सवैयों का आरंभ इसी विषय की एक लंबी पंक्ति से हुआ है :

सतिगुर नामु एक लिव मनि जपै द्रिढु
तिन्ह जन दुख पापु कत होवै जीउ ॥
(पन्ना १३९८)

आरंभ के चार सवैये छंदों में और अंत के चार झोलना छंदों में जप की महिमा दी गई है :

गुरू गुरु गुरू गुरु गुरू जपु प्रानीअहु ॥
(सवैया १३, पन्ना १४००)

भट्‌ट नल ने झोलना और रड छंद का प्रयोग किया है। रड छंद चार चरण का छंद है। प्रथम पंक्ति में ४१ मात्रा (१५+११+१५), दूसरी में २६ मात्रा (११+१५) तथा अंत की दो पंक्ति दोहा (१३+११) के रूप में हैं :

जिसहि धार्यिउ धरति अरु विउमु अरु पवणु ते नीर सर अवर अनल अनादि कीअउ ॥
ससि रिखि निसि सूर दिनि सैल तरूअ फल फुल दीअउ ॥
सुरि नर सपत समुद्र किअ धारिओ त्रिभवण जासु ॥
सोई एकु नामु हरि नामु सति पाइओ गुर अमर प्रगासु ॥ (पन्ना १३९९)

जिस पर ब्रह्म ने धरती और आकाश को धारण किया है; पवन, जल, सरोवर और अन्नादि बनाए हैं। रात्रि में चंद्रमा, तारे तथा दिन में सूर्य उदित होते हैं। पर्वत तथा वनस्पति का निर्माण किया है, जिसने देवता, मानव और सात समुद्रों को बनाया है और तीनों लोकों को आश्रय दिया हुआ है, उसी हरि के सच्चे नाम को श्री गुरु रामदास जी ने अपने गुरु श्री गुरु अमरदास जी से प्राप्त किया है।

श्री गुरु रामदास जी की प्रशस्ति में क्रमांक ३ पर भट्‌ट गयंद जी के १३ सवैये हैं। भट्‌ट गयंद जी ने प्रथम छंद में श्री गुरु रामदास जी को प्रभु के ज्योति-स्वरूप मानते हुए १२ पंक्ति में गुरु की अलख गति की निरंतरता को दर्शाया है। प्रथम आठ पंक्तियों की पृष्ठभूमि के रूप में भक्त प्रहलाद और भक्त ध्रुव का मार्गदर्शन सतिगुरु ने किया। फिर उत्तरार्द्ध में ९-१८ में चार गुरु साहिबान के क्रम में नाम-साधना की अक्षय निधि को विरासत में मिलने का वर्णन है। श्री गुरु रामदास जी ने इस अक्षय निधि को जन-जन में बांट दिया। श्री गुरु रामदास जी प्रत्यक्ष परमात्मा हैं। उनकी गति अलख है तथा वे मुक्ति-दाता हैं:

परतखि देह पारब्रहमु सुआमी आदि रूपि पोखण भरणं ॥
सतिगुरु गुरु सेवि अलख गति जा की स्री

रामदासु तारण तरणं ॥ *(पन्ना १४०१)*

सिक्ख धर्म में प्रभु के विशिष्ट सम्बोधन "वाहिगुरु" का प्रयोग करने का श्रेय भट्ट गयंद को है। सवैया ६,७,८ की अंतिम पंक्ति गुरु (प्रभु) की सिफत-सालाह में "वाहि गुरु" शब्द का प्रयोग है :

सति साचु स्री निवासु आदि पुरखु सदा तुही वाहिगुरू वाहिगुरू वाहिगुरू वाहि जीउ ॥
(सवैया ६, पन्ना १४०२)

भट्ट गयंद जी के अंतिम तीन सवैयों में प्रभु के आदि स्वरूप का सर्वव्यापकता का तथा उसके सृष्टि रचने की लीला का वर्णन है :

सेवक कै भरपूर जुगु जुगु वाहगुरू तेरा सभु सदका ॥
निरंकारु प्रभु सदा सलामति कहि न सकै कोऊ तू कद का ॥ *(सवैया ११, पन्ना १४०३)*

श्री गुरु रामदास जी की स्तुति में क्रमांक ४ पर भट्ट मथरा जी के ७ सवैये अंकित हैं। इनके अतिरिक्त मथरा जी के ७ सवैये श्री गुरु अरजन देव जी के गुरुओं के क्रम के अनुसार दिये गए हैं। भट्ट मथरा श्रद्धावान सिक्ख थे। उन्होंने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के समय में अमृतसर के युद्ध में भाग लिया तथा १४ अप्रैल, १६३४ को वीरगति प्राप्त की। भट्ट मथरा जी की रचना सरस लालित्यपूर्ण है। आरंभ में एक छप्पय छंद में निर्गुण प्रभु के स्वरूप का वर्णन है जो श्री गुरु रामदास जी के हृदय में निवास करता है। एक सुंदर सवैये में श्री गुरु रामदास जी के दर्शन को सुख-सागर का रूप दिया गया है जो नाम सुधा से पूर्ण है, जिसमें संत हंस के रूप में कलख करते हैं, शबदों की तरंग उठती है:

निरमल नामु सुधा परपूरन सबद तरंग प्रगटित दिन आगरु ॥
गहिर गंभीरु अथाह अति बड सुभरु सदा सभ बिधि रतनागरु ॥
संत मराल करहि कंतूहल तिन जम त्रास मिटिओ दुख कागरु ॥
कलजुग दुरत दूरि करबे कउ दरसनु गुरू सगल सुख सागरु ॥ *(सवैया, १४, पन्ना १४०४)*

श्री गुरु रामदास जी की स्तुति के क्रम पांच पर भट्ट बल के पांच सवैये अंकित हैं। परम पिता परमेश्वर के गुणों को धारण कर श्री गुरु रामदास जी ने हरि के परम पद को प्राप्त किया है। उनका जगत में यश-गायन हो रहा है। भट्ट बल जन-जन को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि उन्हीं श्री गुरु रामदास जी का स्मरण करो; उनकी शरण में आकर प्रभु से मिला जा सकता है :

सोई रामदासु गुरु बल्य भणि मिलि संगति धंनि धंनि करहु ॥
जिह सतिगुर लगि प्रभु पाईऐ सो सतिगुरु सिमरहु नरहु ॥ *(सवैया ५४, पन्ना १४०५)*

श्री गुरु रामदास जी की प्रशस्ति का आरंभ भट्ट भिक्खा जी के पुत्र भट्ट कलसहार जी से है तथा प्रशस्ति के समापन के क्रमांक ६ व ७ पर पुनः भट्ट भिक्खा जी के पुत्र कीरत जी और सल जी ने ज्योति की निरंतरता के सम्बंध में प्रथम चार गुरु साहिबान के योगदान का मूर्तिमान रूप चार पंक्तियों में अंकित किया है:

नानकि नामु निरंजन जान्यउ कीनी भगति प्रेम लिव लाई ॥
ता ते अंगदु अंग संगि भयो साइरु तिनि सबद सुरति की नीव रखाई ॥
गुर अमरदास की अकथ कथा है इक जीह कछु कही न जाई ॥
सोढी स्रिस्टि सकल तारण कउ अब गुर रामदास कउ मिली बडाई ॥ *(पन्ना १४०६)*

उक्त सवैये में गुरु नानक साहिब के

चिंतन की मौलिकता श्री गुरु अंगद देव जी का लिपि-निर्धारण और बाणी-प्रचार, श्री गुरु अमरदास जी की वृद्धावस्था में गुरु-सेवा तथा श्री गुरु रामदास जी के अमृत सर सरोवर निर्माण की भावनात्मक व्यंजना है।

भट्ट कीरत जी द्वारा रचित गुरु-शरण सम्बंधी सवैया जन-जन का कंठहार बना हुआ है :

हम अवगुणि भरे एकु गुणु नाही अंम्रितु छाडि बिखै बिखु खाई ॥
माया मोह भरम पै भूले सुत दारा सिउ प्रीति लगाई ॥
इकु उतम पंथु सुनिओ गुर संगति तिह मिलंत जम त्रास मिटाई ॥
इक अरदासि भाट कीरति की गुर रामदास राखहु सरणाई ॥ (पन्ना १४०६)

श्री गुरु अरजन देव जी की प्रशस्ति में उच्चारित सवैयों में कलसहार जी के बारह, मथरा जी के सात तथा हरिबंस जी के दो सवैये हैं।

अचल अविनाशी अकाल पुरख के स्मरण के बाद कलसहार जी श्री गुरु अरजन देव जी के सहज गुणों का विचार करते हैं। गुरु नानक साहिब की भांति श्री गुरु अरजन देव जी भी कर्म करते हुए प्रभु-मिलन की धारणा के समर्थक थे:

उदमु करेदिआ जीउ तूं कमावदिआ सुख भुंचु ॥
धिआइदिआ तूं प्रभू मिलु नानक उतरी चिंत ॥
(पन्ना ५२२)

श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब के संपादन से शबद-गुरु के रूप में गुरबाणी द्वारा ज्ञान का कलश प्रकाशित किया है कि अलक्ष्य अपार शूरवीर गुरु अरजन! तुम जिह्वा से अमृत-वर्षा करते हो। तुमने शबद के द्वारा अहंकार दूर किया है, आकर्षण करने वाली पांच ज्ञानेंद्रियों को संयमित किया है, समाधि में प्रभु को हृदय में धारण किया है। हरि-नाम और सतिगुरु तुम्हारे हृदय में निवास करते हैं। तुमने जनक के समान ज्ञान का कलश प्रकाशित किया है:

हरि नामि लागि जग उधर्यउ सतिगुरु रिदै बसाइअउ ॥
गुरु अरजुन कल्युचरै तै जनकह कलसु दीपाइअउ ॥
(सवैया ९, पन्ना १४०८)

कलसहार जी के बाद भट्ट मथरा जी के सात सवैये हैं। इनमें छप्पय, कबित्त तथा सवैया छंद अपनाये गये हैं। भट्ट भिखा जी ने गुरु की खोज का वर्णन छप्पय छंद में अंकित किया था:

रहिओ संत हउ टोलि साध बहुतेरे डिठे ॥
(पन्ना १३९५)

भट्ट मथरा जी ने गुरु से मिलन से पूर्व की स्थिति का वर्णन किया है। गुरु से मिलन का अवसर मस्तक पर भाग्य-रेखा के उदित होने पर मिलता है। भाग्य-रेखा के उदित होने में तीन प्रेरक तत्वों का समन्वय आवश्यक है-प्रभु की रजा, गुरु का उपदेश तथा शुभ कर्मों में अहंकार का त्याग। भाग्य उदय होना गुरमति विचार के अनुसार प्रभु की रजा पर निर्भर है। गुरु में श्रद्धा से व्यक्ति जीवन-मुक्त होकर जन्म-मरण के बंधन से छूट जाता है:

जब लउ नही भाग लिलार उदै तब लउ भ्रमते फिरते बहु धायउ ॥
कलि घोर समुद्र मै बूडत थे कबहू मिटि है नही रे पछुतायउ ॥
ततु बिचारु यहै मथुरा जग तारन कउ अवतारु बनायउ ॥
जप्यउ जिन्ह अरजन देव गुरू फिरि संकट जोनि गरभ न आयउ ॥ (पन्ना १४०९)

श्री गुरु अरजन देव जी की प्रशस्ति में

अंतिम दो सवैये (छप्पय) भट्ट हरिबंस जी द्वारा रचित हैं जिनमें श्री गुरु रामदास जी के सुर पुर गमन और श्री गुरु अरजन देव जी को गुरगद्दी प्रदान करने का वर्णन है।

इस प्रकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सवैयों के अन्तर्गत गुरबाणी से प्रेरित भट्ट-कवियों के सहज काव्य उद्गार हैं। गुरु साहिबान के आदर्श जीवन के वर्णन में भट्टों ने परंपरागत प्रतीकों का प्रयोग किया है। उनका मंतव्य गुरबाणी की भावना को प्रेरित करना था।

निरंकार प्रभु के स्वरूप का वर्णन श्री गुरु नानक देव जी ने सोरठि राग में किया है कि मैं उस परमात्मा पर बलिहारी जाता हूं जो सत्य-स्वरूप है और सत्य का स्रोत है। वह परमात्मा अदृश्य, अनंत और अपहुंच है। पवित्र हृदय में ही परमात्मा टिक सकता है लेकिन ऐसे सदाचारी विरले ही व्यक्ति होते हैं :

अलख अपार अगंम अगोचर ना तिसु कालु न करमा ॥
जाति अजाति अजोनी संभउ ना तिसु भाउ न भरमा ॥
साचे सचिआर विटहु कुरबाणु ॥ . . .
सूचै भाडै साचु समावै विरले सूचाचारी ॥
(पन्ना ५९७)

भट्ट मथरा जी ने निरंकार प्रभु सति नामु करता पुरखु का निवास श्री गुरु रामदास जी के हृदय में दर्शाया है। भट्ट मथरा जी ने निरंकार प्रभु के वर्णन में सरल शब्दावली का व्यवहार किया है जिससे प्रभु की धारणा का रूप स्पष्ट होता है :

अगमु अनंतु अनादि आदि जिसु कोइ न जाणै ॥
सिव बिरंचि धरि ध्यानु नितहि जिसु बेदु बखाणै ॥
निरंकारु निरवैरु अवरु नही दूसर कोई ॥
भंजन गढ़ण समथु तरण तारण प्रभु सोई ॥
नाना प्रकार जिनि जगु कीओ जनु मथुरा रसना रसै ॥
स्री सति नामु करता पुरखु गुर रामदास चितह बसै ॥ (पन्ना १४०४)

गुरबाणी चिंतनधारा : ४७

अनंदु साहिब : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

एहु सोहिला सबदु सुहावा ॥
सबदो सुहावा सदा सोहिला सतिगुरू सुणाइआ ॥
एहु तिनकै मंनि वसिआ जिन धुरहु लिखिआ आइआ ॥
इकि फिरहि घनेरे करहि गला गली किनै न पाइआ ॥
कहै नानकु सबदु सोहिला सतिगुरू सुणाइआ ॥१६॥

प्रस्तुत पउड़ी में श्री गुरु अमरदास जी गुरु के शबद को आत्मिक आनंद प्रदान करने वाला सुंदर 'गीत' कथन करते हैं। कलयुगी जीवों को प्रेरित करते हुए श्री गुरु अमरदास जी पावन फरमान करते हैं कि सतिगुरु का यह सुहावना मनभावन शबद आत्मिक आनंद प्रदान करने वाला 'गीत' है। सतिगुरु जो सुंदर शबद सुनाते हैं वह सदैव आत्मिक आनंद प्रदाता है, लेकिन (गुरु साहिब स्पष्ट कर देना चाहते हैं) यह गुरु-शबद उन्हीं भाग्यशाली हृदयों में बसता है जो मालिक की दरगाह से इतना ऊंचा भाग्य लिखवा कर आये हैं।

अनेकों ही ऐसे मनुष्य हैं जो दुनिया में भटकते फिरते हैं, जो ज्ञान की बड़ी-बड़ी बातें करते हैं, लेकिन इन कोरी ज्ञान की बातों से किसी को आत्मिक आनंद प्राप्त होने वाला नहीं है। (गुरु साहिब विनती करते है) पूर्ण गुरु का सुनाया हुआ शबद ही आत्मिक आनंद देने वाला है।

वस्तुत: भक्ति-मार्ग पर चलना जीव के अपने वश में नहीं है। जिस पर प्रभु मेहरनबान होता है उसे ही इस भक्ति-मार्ग पर वो स्वयं चलाता है अर्थात् जिन्हें अपनी सिफत-सलाह करने का बल, बुद्धि-प्रेरणा बख्शता है, वही भाग्यशाली जीव गुरबाणी द्वारा आत्मिक आनंद प्राप्त करते हैं। इसी भाव को दृढ़ करवाती श्री गुरु रामदास जी की पावन बाणी है:

सतिगुर की बाणी सति सति करि जाणहु गुरसिखहु हरि करता आपि मुहहु कढाए ॥
(पन्ना ३०८)

वस्तुत: यह पावन बाणी समस्त चिंताओं से मुक्त कर आनंद प्रदान करने में समर्थ है।

पवितु होए से जना जिनी हरि धिआइआ ॥
हरि धिआइआ पवितु होए गुरमुखि जिनी धिआइआ ॥
पवितु माता पिता कुटंब सहित सिउ पवितु संगति सबाईआ ॥
कहदे पवितु सुणदे पवितु से पवितु जिनी मंनि वसाइआ ॥
कहै नानकु से पवितु जिनी गुरमुखि हरि हरि धिआइआ ॥१७॥

उपरोक्त पउड़ी में गुरु साहिब पावन फरमान करते हैं कि जिन जीवों ने हरि की आराधना की है उनका जीवन पवित्र हो गया। उनका आचरण ऊंचा हो गया। गुरु साहिब यहां स्पष्ट करते हैं कि स्वयं नाम जप कर कोई पवित्र नहीं हो जाता अपितु गुरु की शरण में आकर समर्पित भाव से गुरु-दर्शाये मार्ग पर चल कर जिन गुरमुख प्यारों ने हरि का सिमरन किया वे पवित्र आचरण वाले बन गये, उनकी अहंकार रूपी मैल दूर हो गई।

एकाग्रता से प्रभु का सिमरन करने वालों का जीवन इतना पवित्र और उज्जवल हो जाता है कि उनकी संगत में आने वाले अथवा उनके

२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४ मो: ०९३१४६-०९२९३

माता-पिता, सगे-सम्बंधी सभी पवित्र जीवन वाले हो जाते हैं। प्रभु का नाम इतना पवित्र है कि इसे जपने व सुनने वाले पवित्र जीवन वाले हो जाते हैं। वास्तव में वे जीव पवित्र हैं जिन्होंने गुरु के शबद को अपने मन में धारण किया है।

श्री गुरु अमरदास जी पावन फरमान करते हैं कि वे गुरमुख प्यारे पवित्र आचरण वाले हैं जिन्होंने गुरु की शरण में आकर परमेश्वर के नाम का सिमरन किया है, प्रभु-चरणों में हृदय को लीन किया है।

वस्तुत: प्रभु के सिमरन की बरकतों से हृदय से समस्त विकार दूर हो जाते हैं। विषय-विकारों की मैल कट जाती है, यथा बाणी प्रमाण है:

अबिनासी जीअन को दाता सिमरत सभ मलु खोई ॥ *(पन्ना ६१७)*

नाम-सिमरन की कमाई जिन्होंने मन करके की है वे ही पवित्र और पुनीत हैं, यथा:

पवित्र पवित्र पवित्र पुनीत ॥
नामु जपै नानक मनि प्रीति ॥ (पन्ना २७९)

नाम-श्रवण की महिमा को जपु जी साहिब में भी बयान किया गया है कि अकाल पुरख में सुरति जोड़ने वाले साधारण मनुष्य भी अनंत गुणों के मालिक बन जाते हैं। नाम की बरकतों से शेख, पीर तथा पातशाह जैसे पूजनीय पदों को प्राप्त कर लेते हैं, नाम श्रवण की बरकतों से मूढ़ मति भी सूझवान हो जाते हैं तथा प्रभु-प्राप्ति का मार्ग प्राप्त कर लेते हैं। उन्हें संसार रूपी भवसागर की गहराई (असलियत) समझ आ जाती है। अत: ऐसे जीव के लिए संसार रूपी भवसागर से पार उतरना सहज व सरल हो जाता है, यथा :

सुणिऐ सरा गुणा के गाह ॥
सुणिऐ सेख पीर पातिसाह ॥
सुणिऐ अंधे पावहि राहु ॥
सुणिऐ हाथ होवै असगाहु ॥ *(पन्ना ३)*

करमी सहजु न ऊपजै विणु सहजै सहसा न जाइ ॥
नह जाइ सहसा कितै संजमि रहे करम कमाए ॥
सहसै जीउ मलीणु है कितु संजमि धोता जाए ॥
मंनु धोवहु सबदि लागहु हरि सिउ रहहु चितु लाइ ॥
कहै नानकु गुर परसादी सहजु उपजै इहु सहसा इव जाइ ॥१८॥

श्री गुरु अमरदास जी इस पउड़ी में कर्मकांडी (श्रद्धाहीन लोक दिखावे के लिए किए गए कर्म) जीव की स्थिति को स्पष्ट कर रहे हैं कि किस प्रकार कर्मकांडी लोग हमेशा चिंता एवं वहमों में ही फंसे रहते हैं।

गुरु साहिब का पावन संदेश है कि केवल दिखावे के लिए किए गए धार्मिक कर्मों से ईश्वरीय ज्ञान तथा आत्मिक अडोलता का आनंद प्राप्त नहीं हो सकता। अनेकों मनुष्य बाहरी दिखावे के कर्म करके थक गए हैं पर जब तक इस चित्त का जुड़ाव प्रभु-चरणों में नहीं हो जाता तब तक किसी भी मनुष्य की मन की चिंताएं दूर नहीं होती। इस तरह दुविधा वाली स्थिति बनी रहती है। मन की मैल बाहरी किसी युक्ति से उतर नहीं सकती। गुरु-शबद से जुड़कर ही परमेश्वर के चरणों में जुड़ने का सही मार्ग है।

गुरु पातशाह का पावन संदेश है कि अगर मैले मन को पवित्र करना चाहते हो तो शबद से प्रीति करो तथा ऐसा स्वभाव बनाओ कि चित्त की एकाग्रता माया तथा मोह से हटकर प्रभु-चरणों में हो, तभी यह मन पवित्र हो सकता है।

श्री गुरु अमरदास जी पावन फरमान करते हैं कि गुरु-उपदेश एवं गुरु की रहमत से सहजता अर्थात् आत्मिक ज्ञान पैदा हो गया, जिसके फलस्वरूप आत्मिक अडोलता की अवस्था बनेगी। इस तरह मनुष्य के मन की शंकाएं,

भ्रम, भुलेखे, चिंताएं, संताप दूर हो जायेंगे तथा जीव आत्मिक आनंद प्राप्त कर सकेगा।

गुरबाणी में अन्यत्र भी स्पष्ट किया गया है कि बाहरी मैल को पानी, साबुन आदि से साफ किया जा सकता है लेकिन अगर मन, बुद्धि विकार रूपी पापों की मैल से भर जाए तो उसे केवल और केवल परमेश्वर के सिमरन से ही उज्जवल (पवित्र) किया जा सकता है, यथा:

मूत पलीती कपड़ु होइ ॥
दे साबूण लईऐ ओहु धोइ ॥
भरीऐ मति पापा कै संगि ॥
ओहु धोपै नावै कै रंगि ॥ *(पन्ना ४)*

वस्तुत: जब तक बाणी अनुसार उच्च अवस्था नहीं बन जाती तब तक सच्चा आनंद प्राप्त नहीं हो सकता। बाहरी कर्मकांडों से जीव का आत्मिक जीवन संवरने वाला नहीं है, यथा गुरबाणी प्रमाण है:

पाठु पड़िओ अरु बेदु बीचारिओ निवलि भुअंगम साधे ॥
पंच जना सिउ संगु न छुटकिओ अधिक अहंबुधि बाधे ॥
पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई मै कीए करम अनेका ॥
हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका ॥ *(पन्ना ६४१)*

मन की पवित्रता हेतु गुरु पातशाह श्रेष्ठ कर्म की परिभाषा समझाते हुए पावन फरमान करते है। पंचम पातशाह की पावन बाणी प्रमाण है:

हरि कीरति साधसंगति है सिरि करमन कै करमा ॥
कहु नानक तिसु भइओ परापति जिसु पुरब लिखे का लहना ॥ *(पन्ना ६४२)*

प्रस्तुत: पउड़ी में आए *"सहसै जीऊ मलीनु है कितु संजमि धोता जाऐ ॥"* पावन पंक्ति की एक तथ्य से समझने का यत्न करें। सहसा अर्थात् चिंता, वहम, भ्रम, भुलेखा आदि और चिंता कब होती है? जब हमारा मन दुविधा में होता है। मन दुविधा में कब होता है? जब हमारा एक पर विश्वास कायम नहीं हो जाता। एक पर विश्वास कायम क्यों नहीं होता? क्योंकि भ्रम-भुलेखों, कर्मकांडों के कारण हमारा कर्त्ता भाव प्रबल हो जाता है। हम सोचने लगते हैं कि कुछ अच्छा होता है तो वह हमारी बुद्धि या मेहनत के कारण संभव हुआ है और कुछ बुरा होता है तो उसका कारण हम किसी और को मान लेते हैं। अब विचार करें, दोनों ही स्थितियों में हम अपना नुकसान कर रहे होते हैं, वो कैसे? विचारणीय तथ्य अगर हम सोचते हैं कि यह जो अच्छा हुआ हमारे कारण तो हमारा अहंकार और बढ़ जाता है। गुरबाणी आशयानुसार *"हउमै दीरघ रोगु है"* और यह दीर्घ रोग हमारे लिए गुरु-ज्ञान के बिना असाध्य रोग बनकर नासूर बन जाता है। और किसी और के कारण में जिसे हमारे साथ बुरा होने का कारण किसी ओर को माना तो उसके प्रति हमारा मन ईर्ष्या, द्वेष तथा बदला लेने की दूषित भावना से भर उठता है। दोनों ही कारणों से हम आत्मिक गुणों का ह्रास कर लेते हैं।

जीअहु मैले बाहरहु निरमल ॥
बाहरहु निरमल जीअहु त मैले
तिनी जनमु जूऐ हारिआ ॥
एह तिसना वडा रोगु लगा मरणु मनहु विसारिआ ॥
वेदा महि नामु उतमु सो सुणहि नाही फिरहि जिउ बेतालिआ ॥
कहै नानकु जिन सचु तजिआ कूड़े लागे तिनी जनमु जूऐ हारिआ ॥१९॥

प्रस्तुत: पउड़ी में श्री गुरु अमरदास जी पावन फरमान करते हैं कि जो जीव मन करके

मैले है अर्थात् जो मनुष्य विकारी हृदय वाले हैं तथा बाहर से निर्मल भाव का दिखावा करते हैं। (ऐसे ढोंगी) बाहर से पवित्र दिखाई देने वाले तथा अंत:करण से विकारों की मैल से भरे मनुष्य इस जीवन-रूपी बाजी को जूए में हार जाते हैं। ऐसे लोगों को तृष्णा का भयानक रोग लगा हुआ है और माया के लालच में उन्होंने मौत (अटल सच्चाई) को मन से भुला दिया है। (ऐसे बाहरी धार्मिक आडंबर) करने वाले मनुष्य वेद आदि धर्म-ग्रंथों के उदाहरण तो देते हैं परन्तु इन धर्म-ग्रंथों में जो प्रभु का नाम जपने का उत्तम उपदेश है उसकी ओर ध्यान नहीं देते तथा भूतों-प्रेतों की तरह जगत में विचरण करते हैं।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि जो परमेश्वर का नाम-सिमरन त्याग कर माया के मोह में फंसे हुए हैं उन्होंने अपनी जीवन रूपी बाजी दांव पर लगा दी और उसे जूए में हार गए हैं।

वस्तुत: सही जीवन मार्ग से भटक कर केवल बाहरी धार्मिक क्रिया-कलाप करने वाले माया में ही गलतान होकर अपना जीवन नर्क बना लेते हैं। ऐसे लोग जिन्हेंने मौत को भुला दिया है उन्हें ईश्वर कैसे याद रह सकता है? ऐसे लोग मौत जैसी अटल सच्चाई को भुला कर केवल जीवन को ही सच समझने लगते हैं तथा सदा कायम रहने वाले निरंकार को भुला कर नश्वर संसार को ही सर्वस्व मान लेते हैं। संदर्भ में गुरबाणी में कितना सार्थक उदाहरण हमारा मार्गदर्शन करता है:

खाणा पीणा हसणा सउणा विसरि गइआ है मरणा ॥
खसमु विसारि खुआरी कीनी ध्रिगु जीवणु नही रहणा ॥ *(पन्ना १२५४)*

यही नहीं, जिन्हें ईश्वर याद नहीं है उनका बाहरी दिखावे या लोकाचार के लिए किए गए कर्मों से मन उज्ज्वल कैसे हो सकता है? गुरबाणी में अन्यत्र भी यही भाव दृढ़ करवाया गया है, यथा भक्त त्रिलोचन जी का फरमान है:

अंतरु मलि निरमलु नही कीना बाहरि भेख उदासी ॥
हिरदै कमलु घटि ब्रहमु न चीन्हा काहे भइआ संनिआसी ॥ *(पन्ना ५२५-२६)*

सत्य-मार्ग से भटक कर हमारा जीवन कैसे बर्बाद हो जाता है। इस संदर्भ में एक शायर की ये पंक्तियां कितनी सटीक हैं:

सोते में कट गई कुछ गुनाहों में कट गई।
रोते में कट गई कुछ आहों में कट गई।
मंजिल पर चलने वाले मंजिल पे जा लगे,
राह बदलने वालों की राहों में कट गई।

मौत को याद रखने वाले ईश्वर को हमेशा याद रखते हैं तथा श्वास-ग्रास उसका सिमरन करते हुए उसकी रहमत के पात्र बन कर अपने बेशकीमती जीवन रूपी बाजी को जीत कर दूसरों के लिए प्रेरणास्रोत बन जाते हैं। धन्य है ऐसे लोगों का जीवन, क्योंकि नेक-पुण्य कर्मों से यह मानव-जीवन मिला है तथा उस परवरदिगार की रहमत से मुक्ति अर्थात् आत्मिक अडोलता की प्राप्ति मुमकिन है, यथा गुरबाणी-प्रमाण है:

करमी आवै कपड़ा नदरी मोखु दुआरु ॥
नानक एवै जाणीऐ सभु आपे सचिआरु ॥
(पन्ना २))

वाहिगुरु रहमत करे, हम गुरु-दर्शाए मार्ग पर चलकर अपनी जीवन रूपी बाजी जीत कर जाएं।

जीअहु निरमल बाहरहु निरमल ॥
बाहरहु त निरमल जीअहु निरमल सतिगुर ते करणी कमाणी ॥
कूड़ की सोइ पहुचै नाही मनसा सचि समाणी ॥
जनमु रतनु जिनी खटिआ भले से वणजारे ॥
कहै नानकु जिन मंनु निरमलु सदा रहहि गुर

नाले ॥२०॥ *(पन्ना ९१९)*

बीसवीं पउड़ी में श्री गुरु अमरदास जी का पावन फरमान है कि जो मनुष्य गुरु-दर्शाये मार्ग पर चल कर विकारों से रहित हो जाते हैं, अपना जीवन सात्विक बना लेते हैं तथा जो इंसान गुरु से मिली शिक्षा के अनुसार अपना जीवन बना लेते हैं वे तन तथा मन से पूर्णतया पवित्र हो जाते हैं। ऐसे ही लोगों का सामाजिक व्यवहार उत्तम होता है तथा वे सत्याचरण वाले होते हैं। उनके मन में मायावी पदार्थों की चाहत प्रभु-सिमरन की बरकतों से मिट जाती है। आत्मिक आनंद से भरपूर हृदय में मोह तथा माया की सुध-बुध ही नहीं रहती अर्थात् तृष्णाओं से मुक्त मन प्रभु-चरणों में ही लीन रहकर वास्तविक आनंद की प्राप्ति करता है।

जीव जगत में आत्मिक आनंद की प्राप्ति हेतु आया है। वही जीव रूपी व्यापारी श्रेष्ठ हैं जो गुरु-दर्शाये मार्ग पर चल कर नाम रूपी पूंजी का संग्रह करते हैं तथा मानव-जीवन सफल बना जाते हैं।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि हे भाई! जिनका मन गुरु उपदेश तथा प्रभु-सिमरन की बदौलत पवित्र हो जाता है वे हृदय से सदैव गुरु-चरणों से जुड़े रहते हैं, उनका जीवन सदा पवित्र है। वे प्रभु की हजूरी में सदा आनंद की स्थिति में रहते हैं।

वस्तुतः जीवन का असली मनोरथ है लाभ का सौदा करना। गुरबाणी आशयानुसार प्रत्येक जीव इस जगत में व्यापारी है, लेकिन व्यापार कैसा और कौन-सा करना है यह कोई विरला ही गुरु-कृपा से जान सकता है। इस संदर्भ में श्री गुरु नानक देव जी की बाणी कितनी सटीक है। गुरु पातशाह प्रत्येक जीव को ऐसा व्यापार करने तथा लाभ-प्राप्ति का तथ्य समझाते हैं ताकि ईश्वर जिसने हम सब को श्वासों रूपी बेशकीमती पूंजी दी है और जब वह इसका हिसाब मांगे तो हमें शर्मिंदा न होना पड़े, यथा:

वणजु करहु वणजारिहो वखरु लेहु समालि ॥
तैसी वसतु विसाहीऐ जैसी निबहै नालि ॥
अगै साहु सुजाणु है लैसी वसतु समालि ॥
भाई रे रामु कहहु चितु लाइ ॥
हरि जसु वखरु लै चलहु सहु देखै पतीआइ ॥
(पन्ना २२-२३)

इसी भाव को दृढ़ करती पंचम पातशाह की बाणी :

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ ॥
राम नामु संतन घरि पाइआ ॥
तजि अभिमानु लेहु मन मोलि ॥
राम नामु हिरदे महि तोलि ॥ *(पन्ना २८३)*

वस्तुतः इस जगत में सच्चा व्यापार वही करते हैं जो पूर्ण गुरु से प्राप्त शिक्षा के अनुसार चलते हैं जिनका संसार के साथ व्यवहार भी स्वार्थ रहित है। ऐसे जीव ही हृदय से विनम्रशील रहकर जगत के व्यवहार में भी चित्त को मोह तथा माया से बचा कर निरंकार के चरणों में जोड़ कर रखते हैं तथा प्रभु-भक्ति रूपी सच्चा व्यापार करके अपना लोक तथा परलोक संवार लेते हैं।

उपरोक्त पउड़ी के गूढ़ार्थ को सहजता से समझना हो तो एक नजर श्री गुरु नानक देव जी के खरा सौदा (सच्चा सौदा) की ओर देख लेना चाहिए। गुरु पातशाह के पिता जी ने २० रुपये देकर उन्हें सच्चा सौदा करने की हिदायत दी थी। उस हिदायत पर गुरु पातशाह ने पूर्णतः अमल किया था। आपने भूखे साधुओं को भोजन तथा वस्त्र देकर पूरी राशि इसमें लगाकर सारी मानवता को पावन सिद्धांत पर चलने की शिक्षा दी--किरत करो, नाम जपो तथा वंड छको। इसी खरे सौदे की बदौलत सिक्ख जगत में लंगर की प्रथा आज तक कायम है तथा रहती दुनिया तक कायम रहेगी, क्योंकि "गरीब का मुख गुरु की गोलक है"।

गुरु-उपमा : १४

भाई गुरदास जी की चौथी वार

*-प्रो बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा**

सद्‌गुणों को धारण करने वाला अपना गुण नहीं छोड़ता। सद्‌गुणों से भरपूर व्यक्ति की विशेषता भी है कि वह अपने इन गुणों के कारण अपना मूल्य डलवा लेता है। चौथी वार की बारहवीं पउड़ी में शुद्ध सोने की विशेषता और अपना मूल्य कैसे डलवाना है, की व्याख्या करते हुए भाई गुरदास जी बताते हैं कि कैसे सोना, रेत के कणों में पड़ा होता है। रेत को धो-धोकर सोने के छोटे-छोटे कण एकत्र किये जाते हैं। फिर जब वह थोड़ी-सी मात्रा, रत्ती या माशा या तोले के रूप में एकत्र हो जाए तो वह एकत्र हुआ अपनी चमक दर्शाता है। उपरांत उसको कुठाली में डालकर ढाला जाता है। उसकी डली बनी देखकर सुनार बहुत खुश होता है। फिर उसके छोटे-छोटे पत्तरे करके मसाले लगा-लगाकर आग के ताप द्वारा शुद्ध किया जाता है। सुनार यह कार्य करता हुआ मन में प्रसन्न होता रहता है कि उसका परिश्रम सफल हो रहा है। इस प्रकार जब वह सोने को १२ वन्नियां शुद्ध करके, कस पर लगा कर उसकी शुद्धता परखता है तो फिर यही सोना टकसाल में जाकर बादशाही सिक्का बनता है। इससे भाव यह हुआ कि समस्त कार्य में सोने के कण को अनेकों बार वदान, अहिरण, आग का ताप सहना पड़ता है, परंतु यह सब सहने के बाद भी उसकी चमक बनी रहती है तथा वह बादशाही खजाने में अपना मूल्य डलवाता है। इस प्रकार नम्रता आदि गुणों वाला मनुष्य जीवन में अनेकों कष्ट सहन करके भी अपना स्वभाव नहीं बदलता। भाई गुरदास जी के शब्दों में :

रेणि रसाइण सिझीऐ रेतु हेतु करि कंचनु वसै।
धोइ धोइ कणु कढीऐ रती मासा तोला हसै।
पाइ कुठाली गालीऐ रैणी करि सुनिआरि विगसै।
घड़ि घड़ि पत्र पखालीअनि लूणी लाइ जलाइ रहसै।
बारह वंनी होइ कै लगै लवै कसउटी कसै।
टकसालै सिका पवै घण अहरणि विचि अचलु सरसै।
सालु सुनईआ पोतै पसै ॥१२॥

आपा-भाव गंवा कर किसी की खुशी, आनंद के लिए सहायक होना भी एक सद्‌गुण है। यह गुण बड़े से बड़े और छोटे से छोटे में होना चाहिए। कई बार बड़ा अपने बढ़प्पन के अहंकार में फंसा रहता है। उसके मुकाबले में छोटा अपना आप कुर्बान कर देता है। खसखस के दाने का उदाहरण हमारे सामने है। भाई गुरदास जी बताते हैं कि खसखस का दाना बीज बन कर मिट्‌टी में मिल जाता है। फिर जब वह पोस्त का पौधा बनता है तो उस पर तरह-तरह के फूल खिलते हैं जिनको देखने में आनंद आता है। पौधे की डोडियां एक दूसरी से आगे होकर अपना आपा-भाव प्रकट करती हैं। डोडी के ऊपर पोस्त होता है जिसको काट-काट कर छोटे-छोटे टुकड़े कर देते हैं। इसके लाल रंग के पानी को प्यालों में डाल कर योगी और भोगी पीते हैं और मस्ती को प्राप्त करते हैं:

खसखस दाणा होइ कै खाक अंदरि होइ खाक समावे।
दोसतु पोसतु बूटु होइ रंग बिरंगी फुल्ल खिड़ावै।
होडा होडी डोडीआ इक दूं इक चढ़ाउ चढ़ावै।

**उप सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर। मो : ९८१४८९८२१२*

सूली उपरि खेलणा पिछों दे सिरि छत्रु धरावै।
चुखु चुखु होइ मलाइ कै लोहू पाणी रंगि रंगावै।
पिरम पिआला मजलसी जोग भोग संजोग बणावै।
अमली होइ सु मजलस आवै ॥१३॥

मीठा बोलना भी एक सद्गुण है। मीठा बोलने वाला व्यक्ति यह गुण कदापि नहीं गंवाता चाहे उसको कितने भी कष्ट सहन् करने पड़ें। उसकी मिठास दूसरों में भी मिठास का रस भर देती है। ईख या गन्ने के दृष्टांत के द्वारा भाई गुरदास जी बताते हैं कि गन्ना रस से भरा होता है, वह बोलने या न बोलने दोनों ही परिस्थितियों में मीठा रहता है। उसका रस पीड़ कर निकालें या चूप कर निकालें वह मीठा ही रहता है।

गन्ने के घने खेत में आवाज नहीं सुनाई देती और न ही कोई छुपा हुआ दीखता है भाव मीठा बोलने वाला व्यक्ति मंद वचनों को सुनकर भी अनसुना कर देता है, गलत देखकर भी अनदेखा कर देता है। इसकी आंखों को अथवा गांठों को बीज के रूप में भूमि में बोया जाता है। इनसे पत्तियां निकलती हैं। फिर एक पौधे से कई पौधे सिर नीचे और पांव ऊपर करके उग पड़ते हैं। ये देखने को बहुत प्रिय लगते हैं। फिर गन्ना काट कर कोल्हू के द्वारा पीड़ा जाता है। ये दुखदायी कष्ट सहन् करके भी गन्ना मीठा तथा प्रिय रहता है। गन्ने के रस से गुड़ बनता है जो धर्म-कार्यों पर और विवाह-शादियों में प्रशाद बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है। कई बुद्धिहीन लोग इस मीठे का शराब आदि बनाने के लिए भी गलत प्रयोग करते हैं। इस प्रकार भाई गुरदास जी कहते हैं कि जो लोग गन्ने की मिठास के गुण से शिक्षा लेते हैं वे मीठे स्वभाव वाले बनकर भले काम करते हुए संसार से चले जाते हैं और जो कड़वे होते हैं वे पाप-कर्म करते हुए डूब जाते हैं :

रस भरिआ रसु चखदा बोलण अणु बोलण अभिरिठा।
सुणिआ अणसुणिआ करै करे वीचारि डिठा अणडिठा।
अखी धूड़ि अटाईआ अखी विचि अंगूरु बहिठा।
इक दू बाहले बूट होइ सिर तलवाइआ इठहु इठा।
दुहु खुंढा विचि पीड़ीऐ टोटे लाहे इतु गुणि मिठा।
वीह इकीह वरतदा अवगुणिआरे पापा पणिठा।
मंनै गंनै वांग सुधिठा ॥१४॥

निव-चलना भी नम्रता का प्रतीक है। जो मन करके नीचा होकर चलता है वह सदैव ऊंचाइयों को प्राप्त होता है। दूसरा, जो कभी किसी के काम आता है वह सदैव सफल है। ऐसा गुण धारण करने वाले मनुष्य का जीवन सफल होता है। स्वांती बूंद और सिप्पी के दृष्टांत द्वारा भाई गुरदास जी प्राणी-मात्र को समझाते हैं कि बादल की सुहावनी बूंद (स्वांती बूंद) आकाश से नीचे की ओर आती है और अपना आपा गंवा कर समुद्र की असीम जल-धाराओं में मिल कर सिप्पी के मुंह में जा पड़ती है। सिप्पी स्वांती बूंद को मुंह में डालकर मुंह बंद कर लेती है और समुद्र के गहरे जल में जा छिपती है। फिर गोताखोर सिप्पी को बाहर निकाल लेता है। सिप्पी ने परोपकार करके बूंद को अमूल्य मोती बना दिया। फिर पराये वश पड़कर अपने मुंह के दांत तुड़वाती है। सिप्पी मोती दान करने के बाद पश्चाताप नहीं करती। इस प्रकार भाई गुरदास जी के अनुसार ऐसे व्यक्ति का जन्म सफल होता है जो आपा गंवा कर कोई लाभ प्राप्त न करे, परंतु ऐसे प्राणी हैं कोई-कोई अथवा विरले ही:

घणहर बूंद सुहावणी नीवी होइ अगासहु आवै।
आपु गवाइ समुंदु वेखि सिपै दे मुहि विचि समावै।
लैदो ही मुहि बूंद सिपु चुंभी मारि पतालि लुकावै।

फड़ि कढै मरुजीवड़ा पर कारज नो आपु फड़ावै।
परवसि परउपकार नो पर हथि पथर दंद भनावै।
भुलि अभुलि अमुलु दे मोती दान न पछोतावै।
सफल जनमु कोई वरुसावै ॥१५॥

हीरा स्वयं को बेंधवा कर गले का हार बन कर शोभा पाता है। सिक्ख और गुरु के मिलाप की कथा भी कुछ इसी प्रकार की है। भाई गुरदास जी चौथी वार की १६वीं पउड़ी में हीरे के दृष्टांत द्वारा सिक्ख और गुरु के मिलाप की वार्ता बताते हैं कि जैसे वरमे की नोक से हीरे की तीक्ष्ण अणी लगाकर हीरा धीरे-धीरे बेंधा जाता है, फिर धागे (प्रेम डोरी) के साथ पिरोकर सुंदर माला पिरोई जाती है, इसी प्रकार शबद रूपी मणी के साथ मनुष्य के हीरे मन को बेंधा जाता है और सतिसंगत के द्वारा गुरु-शबद के साथ मन को जोड़कर, अहंभाव को मार कर मन को स्थिर किया जाता है। फिर वह गुरु के शबद के साथ अपने मन को स्थिर करता है। फिर वह गुरु के शबद के साथ अपने मन को जीतता है। मनुष्य के गुणों का बड़ा गुण 'नम्रता' गुरमुख के शरीर में पैदा हो जाता है। इस चरण-धूल की बराबरी कामधेनु गाय भी नहीं कर सकती। यह अलूणी सिल को चाटने वाली तपस्या है। ऐसा अमृत-रस प्राप्त करने के लिए लाखों लोग तरसते हैं परंतु यह प्राप्त नहीं होता, क्योंकि गुरु की शिक्षा को कोई विरले ही सुनते हैं और अर्जित करते हैं :

हीरे हीरा बेधीऐ बरमे कणी अणी होइ हीरै।
धागा होइ परोईऐ हीरै माल रसाल गहीरै।
साधसंगति गुरु सबद लिव हउमै मारि मरै मनु धीरै।
मन जिणि मनु दे लए मन गुणि विचि गुण गुरमुखि सरीरै।
पैरी पै पा खाकु होइ कामधेनु संत रेणु न नीरै।
सिला अलूणी चटणी लख अंम्रित रस तरसन सीरै।
विरला सिख सुणै गुर पीरै ॥१६॥

चौथी वार में चूंकि नम्रता आदि सद्गुणों की व्याख्या की गई है इसलिए सद्गुण-धारक मनुष्य को गुरसिक्ख कहा जाता है, जीवन-मुक्त माना जाता है। इस वार की १७वीं पउड़ी में ऐसे पुरुष की करनी को बयान किया गया है। भाई गुरदास जी उल्लेख करते हैं कि गुरु का सिक्ख, जिसको गुरसिक्ख कहा जाता है, वह गुरु की शिक्षा को सुनकर उसका मनन करता है परंतु वह भीतर से दिल-दिमाग करके सियाना तथा समझदार होता है। वह शबद को सुरति में रखकर सदैव चेतन्य तथा सावधान रहता है। गुरु के शबद के बिना वह और कुछ सुनता नहीं, अपने कान बंद कर लेता है। वह सतिसंगत में केवल सतिगुरु के दर्शन करता है और (अन्य, बुरी) दिशाओं की ओर देखने के समय वह अंधों-कानों की तरह हो जाता है। आरंभ से वह 'वाहिगुरु-मंत्र' का पिरम प्याला प्राप्त करके धीरे-धीरे पीता रहता है। वह इतना नम्र हो जाता है कि सतिसंगत के चरणों के साथ लगकर चरण-धूल, चरणामृत बन जाता है। वह भंवरे की भांति चरण-कंवलों का अभिलाषी बन कर शेष सांसारिक अभिलाषाओं से अलग रहता है। इस प्रकार जीवन-मुक्ति का उपर्युक्त वाला पहनावा पहन भाव गुरु-शबद में लीन होकर अन्य बुरी दिशाओं से अंधा, बहरा होकर साधारण-सा बना रहता है। इसी प्रकार गुरसिक्खी पर चलकर वह अपना जीवन सफल करता है :

गुर सिखी गुरसिख सुणि अंदरि सिआणा बाहरि भोला।
सबदि सुरति सावधान होइ विणु गुर सबदि न सुणई बोला।

सतिगुर दरसनु देखणा साधसंगति विणु अन्हा खोला।
वाहगुरू गुरु सबदु लै पिरम पिआला चुपि चबोला।
पैरी पै पा खाक होइ चरणि धोइ चरणोदक झोला।
चरण कवल चितु भवरु करि भवजल अंदरि रहै निरोला।
जीवणि मुकति सचावा चोला ॥१७॥

गुरसिक्खी का मार्ग बहुत ऊंचा तथा निर्मल है। ऊंची होती हुई भी गुरसिक्खी स्वयं को बहुत नम्र-भाव वाली, निमाणी और छोटी ही कहलवाती है। भाई गुरदास जी ने १८वीं पउड़ी में बाल की सूक्ष्मता का दृष्टांत देकर गुरसिक्खी पर प्रकाश डाला है कि जैसे सिर के पतले तथा बारीक बालों के साथ संत पुरुषों के चरणों को चंवर किया जाता है वैसे वह गुरु के शबद का स्नान करके प्रेम के आंसुओं के साथ गुरु-चरणों को धोता है।

जब प्रकृति की ओर से काले बाल सफेद कर दिये जाएं तो यह समझ में आ जाता है कि अब जाने का समय नजदीक आ रहा है। ये सफेद बाल इसी की निशानी हैं। गुरसिक्ख गुरु के चरणों के साथ लग-लग कर चरणों की धूल बन जाता है। फिर सतिगुरु जी अपनी कृपा की दृष्टि डालकर निहाल कर देते हैं। वे कौए जैसी कुमति के पीछे लगने वाले को हंस की भांति निर्मल (सफेद) कर देते हैं भाव मनमुख को गुरमुख बना देते हैं, जो अच्छे गुण (मोती) धारण करता है तथा दूसरों को धारण कराता है। भाई गुरदास जी के अनुसार यह सिक्खी बाल से भी सूक्ष्म भाव कठिन कमाई वाली मानी जाती है परंतु गुरसिक्ख इसको प्रत्येक स्थिति में अपनी कमाई का माध्यम बनाता और पालता है। इस प्रकार गुरसिक्ख इस संसार-भवजल को गुरु के बख्शिश किये शबद के प्रेम-रस के साथ पार करता है। भाई गुरदास जी बाल का दृष्टांत देते हुए लिखते हैं :

सिरि विचि निकै वाल होइ साधू चरण चवर करि ढालै।
गुर सर तीरथ नाइ कै अंझू भरि भरि पैरि पखालै।
काली हूं धउले करे चलण जाणि नीसाणु सम्हालै।
पैरी पै पा खाक होइ पूरा सतिगुरु नदरि निहालै।
काग कुमंतहुं परम हंसु उजल मोती खाइ खवालै।
वालहु निकी आखीऐ गुर सिखी सुणि गुरसिख पालै।
गुरसिखु लंघै पिरम पिआलै ॥१८॥

गुल्लर एक वृक्ष है जिसको फल लगते हैं। उस फल में एक नन्हा-सा कीड़ा होता है जो उस फल या वृक्ष को अपना संसार समझता है। गुल्लर को लाखों फल लगते हैं। फल टूट जाते हैं तो फिर वह अकेला ही रह जाता है। इसी प्रकार भाई गुरदास जी गुल्लर वृक्ष और उसके फल के भीतर के कीड़े का दृष्टांत देकर बताते हैं कि जैसे एक बाग में लाखों अर्थात् अनेकों वृक्ष होते हैं और लाखों पौधों को एक बाग कहा जाता है इसी प्रकार ब्रह्मांड में भी लाखों संसार बाग की भांति परमात्मा के एक कण में समाये हुए हैं, परंतु वाहिगुरु जिसके ऊपर कृपा कर देता है वह गुरमुखों की सतिसंगत में मिलकर आनंद लेता है, वह चरणों की धूल बनकर हुक्म के अंदर रहता है। इस प्रकार से नम्रता धारण करने के साथ उसका अहं-भाव दूर होता है और मनुष्य को स्वयं की सोझी प्राप्त होती है:

गुलर अंदरि भुणहणा गुलर नों ब्रहमंडु वखाणै।
गुलर लगणि लख फल इक दू लख अलख न जाणै।

लख लख बिरख बगीचिअहु लख बगीचे बाग बबाणै।
लख बाग ब्रहमंड विचि लख ब्रहमंड लूअ विचि आणै।
मिहरि करे जे मिहरिवानु गुरमुखि साधसंगति रंगु माणै।
पैरी पै पा खाकु होइ साहिबु दे चलै ओहु भाणै।
हउमै जाइ त जाइ सिञाणै ॥१९॥

नम्र-भाव में रहना, विनम्र होकर चलना, स्वयं में छोटे या कुछ न होने का अहसास सदैव शोभा बढ़ाता है। भाई गुरदास जी की चौथी वार की २०वीं पउड़ी में दूज के चंद्रमा के दृष्टांत के साथ बताया है कि कैसे छोटी अवस्था भी शोभा पाती है। भाई गुरदास जी बताते हैं कि अमावस वाले दिन और चंद्रमा की प्रथम तिथि को चंद्रमा आलोप होता है। दूज भाव दूसरी तिथि पर छोटा-सा निकलता है तथा लोग उसको नमन करते हैं। चंद्रमा की सोलह कलाएं मानी जाती हैं जो एक-एक करके समाप्त होती हैं, परंतु एकम को एक कला अर्थात् नया जन्म होने के कारण पुन: शोभा देता है और अपनी अमृतमयी ठंडी शीतल किरणों के साथ खेतों तथा वृक्षों को सींचता है, सबको शीतलता, शांति तथा संतोष देता है। यह सहज और संयोग का अमूल्य रत्न है। अंधेरे में प्रकाश देता है और चकोर की प्यार की डोरी में खिंचा रहता है। यह सभी कुछ आपा-भाव गंवा कर प्राप्त होता है। जिस प्रकार दूज का चंद्रमा छोटा होकर भी शीतलता, शांति, संतोष, सहज में रहता है इसी प्रकार ये गुण धारण करने वाला गुरमुख-जन भी संसार के अंदर शोभा पाता है:

दुइ दिहि चंदु अलोपु होइ तीऐ दिह चढ़दा होइ निका।
उठि उठि जगतु जुहारदा गगन महेसुर मसतकि टिका।
सोलह कला संघारीऐ सफलु जनमु सोहै कलि इका।
अंम्रित किरणि सुहावणी निझरु झरै सिंजै सहसिका।
सीतलु सांति संतोखु दे सहज संजोगी रतन अमिका।
करै अनेरहु चानणा डोर चकोर धिआनु धरि छिका ॥
आपु गवाइ अमोल मणिका ॥२०॥

निमाणे होकर की हुई भक्ति ही स्वीकृत है और ऐसे निमाणे होकर भक्ति करने वालों को ही सदैव सम्मान मिलता है। चौथी वार की अंतिम पउड़ी में ध्रू भक्त के कथानक के द्वारा गुरसिक्खों की अवस्था को बयान किया गया है। भाई गुरदास जी बताते हैं कि ध्रू भक्त ने निमाणा होकर भक्ति की और परमात्मा के दर्शन किये। निरंकार ने भी भगत वछल बनकर निमाणे को स्वयं सम्मान दिया। उसको मातलोक में मुक्त करके आकाश में भी उसका स्थान पक्का कर दिया। सूर्य, चांद तारे आदि सभी उसकी परिक्रमा करते हैं परंतु प्रभु के बढ़प्पन की थाह नहीं पाई जा सकती। इस प्रकार निमाणे होकर की भक्ति के सुख को गुरमुख जन समझ लेते हैं :

होइ निमाणा भगति करि गुरमुखि ध्रू हरि दरसनु पाइआ।
भगति वछलु होइ भेटिआ माणु निमाणे आपि दिवाइआ।
मात लोक विचि मुकति करि निहचलु वासु अगासि चड़ाइआ।
चंदु सूरज तेतीस करोड़ि परदखणा चउफेरि फिराइआ।
वेद पुराण वखाणदे परगटु करि परतापु जणाइआ।
अबिगति गति अति अगम है अकथ कथा वीचारु न आइआ।
गुरमुखि सुख फलु अलखु लखाइआ ॥२१॥४॥

गुरु-गाथा : २३

गुरु लाधो रे!

*-डॉ अमृत कौर**

मक्खण शाह लुबाणा एक बहुत बड़ा व्यापारी था, गुरु-घर का अनन्य प्रेमी और श्रद्धालु। एक बार उसका सामान से लदा बेड़ा (जहाज) सूरत बंदरगाह के समीप तूफान की लपेट में घिर कर डगमगाने लगा। तूफान की लहरें इतनी प्रचंड थीं कि ऐसे लगने लगा जैसे सामान से भरा जहाज पूर्णतया नष्ट हो जाएगा। इस संकट की घड़ी में उसे गुरु-घर का ध्यान आया :

कीता लोड़ीऐ कंमु सु हरि पहि आखीऐ ॥
कारजु देइ सवारि सतिगुर सचु साखीऐ ॥

(पन्ना ९१)

"जो सरणि आवै तिसु कंठि लावै" के अनुसार शरणागत की रक्षा करने के लिए तो गुरु महाराज दौड़े चले आते हैं। उसने ध्यान-मग्न हो पूर्ण तल्लीनता और श्रद्धा के साथ जपु जी साहिब का पाठ पढ़ा, गुरु-घर की आराधना करते हुए अरदास की :

कर चित एकाग्र जप को पढ़ा।
पुनि सतिगुरु जी का किआ धिआन।
मन मिटे भरम सुरि लेहि पिआन।

(महिमा प्रकाश)

हे गुरु महाराज! मेरा बेड़ा पार कीजिए। उसने संकल्प किया कि यदि सब कुछ ठीक-ठाक हो गया तो वह गुरु-घर में पांच सौ मोहरें भेंट करेगा। गुरु-कृपा से तूफान थम गया। बेड़ा सही-सलामत समुद्र के किनारे जा लगा। घर पहुंचने पर वह माथा टेकने के लिए मोहरें लेकर गुरु-घर की ओर चल पड़ा। रास्ते में उसे पता चला कि श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब ज्योति-जोत समा गये हैं और उनके अंतिम वचन थे "बाबा बकाले" अर्थात् "नवम गुरु गांव 'बकाला' में हैं और रिश्ते में मेरे 'बाबा' लगते हैं।"

गांव बकाला में पहुंच कर मक्खन शाह चकरा गया। वहां तो धीरमल और उसके साथियों ने मंजियां स्थापित कर रखी थीं, अनेकों गुरु बने बैठे थे। वास्तविक 'गुरु' कौन है, यह पहचानना मुश्किल था। वास्तविक 'गुरु' को कैसे ढूंढा जाए, यह उसकी अल्प-बुद्धि की समझ से बाहर था। एकाएक उसे एक तरकीब सूझी। गद्दी लगा 'गुरु' बने बैठे व्यक्तियों के सम्मुख उसने दो-दो मोहरें रखनी शुरू कर दीं इस संकल्प के साथ कि जो इनमें सच्चा 'गुरु' होगा वो स्वयं पूर्ण भेटा मांग लेगा। सभी ने दो-दो मोहरें सहर्ष स्वीकार कर लीं।

अब वह हार कर निराश होकर बैठ गया। उसे समझ नहीं आ रहा था कि अब वो क्या करे। जब वह बाईस बनावटी 'गुरुओं' को भेटा दे चुका और कोई कुछ नहीं बोला तो उसने अकस्मात एक बुजुर्ग से पूछ लिया--"कोई और 'गुरु' बाकी तो नहीं बचा?" उत्तर मिला, "हां, एक महापुरुष नीचे गुफा में बैठे प्रभु-सिमरन कर रहे हैं। वे पिछले कई साल से गुफा में बैठे प्रभु-सिमरन में ही लीन हैं।" ऐसे महापुरुष के दर्शनों का आकर्षण उसे उनके पास खींच ले गया। पास पहुंचा तो देखा कि गुफा

(शेष पृष्ठ ७० पर)

**१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, जीरकपुर-१४०६०३ (पंजाब)*

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-३६

सात्विक व्यक्तित्व के धारक कवि - भाई माला सिंघ

-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'

दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबारी कवियों में एक महत्वपूर्ण नाम कवि भाई माला सिंघ का भी है। दरबारी कवियों की उपलब्ध सभी सूचियों में भाई माला सिंघ का नाम दर्ज है। सिक्ख ऐतिहासिक स्रोतों में भाई माला सिंघ को एक निर्धन, किरती और सिदकवान सिक्ख के रूप में चित्रित किया गया है। कवि भाई माला सिंघ आध्यात्मिक प्रवृत्तियों एवं रुचियों वाले थे और स्वभाव से लज्जालु थे। आपके विषय में कहा भी गया है :

माला सतिगुर जाप की, माला सिंघ की जान।
जांते को अभिमान है, चतुर वरग को सान।

कवि भाई माला सिंघ के जीवन का एक प्रसंग बहुत ही प्रसिद्ध है। आप अनंदपुर साहिब में रहते थे। वहीं एक अन्य सिक्ख भाई लहौरा सिंघ भी निवास करते थे। भाई लहौरा सिंघ महाजन सिक्ख थे और पैसे का लेन-देन करना इनका धंधा था। भाई लहौरा सिंघ ने कवि भाई माला सिंघ से कुछ पैसे उधार ले रखे थे। उधर कवि भाई माला सिंघ की आर्थिक स्थिति कोई बहुत अच्छी नहीं थी, परंतु बहुत अधिक लज्जालु होने के कारण भाई माला सिंघ भाई लहौरा सिंघ से पैसे मांगते नहीं थे। एक-दो बार हिम्मत करके मांगे भी तो भाई लहौरा सिंघ ने इधर-उधर की बातें करके टाल दिया।

एक बार अपनी सिंघनी के बार-बार कहने पर कवि भाई माला सिंघ मन पक्का करके भाई लहौरा सिंघ के घर गये और अपने उधार दिये पैसे मांगे। भाई लहौरा सिंघ ने चालाकी दिखाते हुए गुरबाणी की एक तुक का हवाला दिया:

लेखा कोइ न पुछई जा हरि बखसंदा ॥

(पन्ना १०९६)

अर्थात् जब सतिगुरु की बख्शिश हो तो कोई हिसाब-किताब नहीं पूछा जाता।

यह कहकर भाई लहौरा सिंघ ने खुद को सुरखुरू किया और पैसा लौटाने से सफाई से इंकार कर दिया।

जब इस घटना की जानकारी दशमेश पिता को मिली तो वे बड़े आश्चर्यचकित हुए। गुरु जी ने सोचा कि भाई लहौरा सिंघ सिक्ख तो पक्का रहा है, पर इसने यह क्या किया? सारा भार गुरु के ऊपर डाल दिया। तुक गुरबाणी की पावन पंक्ति पढ़ी और अमल किया खोटा।

दशमेश पिता ने भाई लहौरा सिंघ को बुलाया और कहा कि *"हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥"* भी गुरबाणी में ही आया है। इसलिए भाई माला सिंघ के पैसे वापस करो।

भाई लाहौरा सिंघ बहुत शर्मिंदा हुआ। अगले दिन सुबह-सुबह ही उसने कवि भाई माला सिंघ के सारे पैसे वापस कर दिये।

कवि भाई माला सिंघ अपने सात्विक व्यक्तित्व के अनुरूप ही एक उच्च कोटि के कवि रहे होंगे। यह हमारा दुर्भाग्य है कि उनकी

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब। मो: ०९४१७२-७६२७१*

कोई भी रचना आज हमें उपलब्ध नहीं है। बहुत संभव है कि कवि भाई माला सिंघ रचित काव्य या तो सरसा नदी में बह गया या फिर दशमेश पिता के चले जाने के पश्चात् अनंदपुर साहिब की तबाही में नष्ट हो गया।

कोई रचना उपलब्ध न होने के बावजूद दशमेश पिता की कृपा के कारण भाई माला सिंघ का नाम एक श्रेष्ठ कवि के रूप में सदैव प्रसिद्ध रहेगा।

गुरु लाधो रे!

(पृष्ठ ६८ का शेष)

किसी आलौकिक आभा से प्रकाशित थी। एक तेजस्वी चेहरा नाम-सिमरन में निमग्न था शांत और प्रसन्नचित्त। भाई मक्खण शाह चुपचाप बैठ गया और दो मोहरें मस्तक झुका उनके सम्मुख रख दीं। गुरु जी ने आंखें खोलीं और मुस्कराकर कहने लगे, "क्यों भाई गुरसिक्खा! गुरु-घर के साथ ही हेराफेरी?" मक्खण शाह गुरु-चरणों पर गिर कर माफी मांगने लगा, "गुरु जी मुहरें तो क्या आपके चरणों में मेरा सर्वस्व अर्पण है। इतने पाखंडियों में से आपको खोजने के लिए ही मुझे यह सब करना पड़ा।" वह खुशी से झूम उठा। उसे 'सच्चा गुरु' मिल गया था। उसकी प्रसन्नता का पारावार नहीं था। खुशी से आत्मविभोर हो वह बाहर दौड़ा गया, छत पर चढ़ कर आवाजें लगाने लगा, "गुरु लाधो रे!, गुरु लाधो रे!" (अर्थात् 'सच्चा गुरु' मिल गया) पाखंडी गुरुओं से तंग आ चुकी सिक्ख संगत श्री गुरु तेग बहादर जी की ओर उमड़ पड़ी। गुरु जी के चरणों में मस्तक निवाया और उन्हें गुरगद्दी संभालने का अनुरोध किया ताकि सिक्ख-जगत को उचित दिशा-निर्देशन मिल सके और इन पाखंडी व लोभी 'गुरुओं' से मुक्ति मिले, जिनके पाखंड से संगत तंग आ चुकी थी। भाई गुरदित्ता जी ने गुरु-मर्यादा के अनुसार गुरु जी को गुरगद्दी का कार्यभार चलती आ रही परंपरा के अनुरूप सौंपा।

इस प्रकार भाई मक्खण शाह सिक्ख संगत को सच्चे गुरु से मिलाने का सबब अथवा माध्यम बने, जिस कारण उनका जिक्र सिक्ख इतिहास में बहुत प्यार-सत्कार के साथ किया जाता है।

कविता

गुरु नानक साहिब की महिमा

गुरु नानक की महिमा अपरंपार।
गुरु ने किये हम पर अनेक उपकार।
प्रचार फेरी में नानकमता आकर,
ज्ञान का संदेश फैलाया।
हम पापी, हम नीच, हम कूकर को,
सत्य का मार्ग दिखाया।
त्याग कर हम अपने स्वार्थ को,
गुरु नानक के गुण गाएं।
नानकमता की पावन धूल को,
मस्तक पर लगाएं।
यदि पथ चाहते हैं हम पाना,
तो गुरु-घर हमें है जाना।
गुरु-भक्ति का दीप जगा हृदय में,
प्रभु-रंग में डूब जाना।
हे गुरु नानक! गुरमति ज्ञान का,
एक टुकड़ा मुझे भी दे दो।
इस अकिंचन बालक को,
भवसागर से पार करा दो।

-श्री असित कुमार, बाल विकास विद्या मंदिर, नानकमता, जिला ऊधम सिंघ नगर (उत्तराखंड)-२६२३११

गतका सिक्ख कौम की मार्शल आर्ट
कलर टी. वी. चेनल के प्रबंधक क्षमा मांगें : जत्थेदार अवतार सिंघ

अमृतसर। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने 'कलर्स' टी. वी. चेनल से प्रसारित किये जा रहे कार्यक्रम 'इंडिया ग्रेट टेलेंट' में गतका खेलने वाले ७ वर्षीय अनुभवी सिक्ख बच्चे मनप्रीत सिंघ को कार्यक्रम के एक जज साजिद खान द्वारा यह कहे जाना कि "बच्चों के हाथों में तलवार शोभा नहीं देती, बच्चों द्वारा तलवार या अन्य सिक्ख परंपराओं से जुड़े हथियारों से कौशल दिखाने से शो देख रहे बच्चों में हिंसा की भावना बढ़ेगी" का गंभीर नोटिस लेते हुए कहा कि ऐसा कहना जज की संकीर्ण सोच का प्रतीक तथा सिक्खों की भावनाओं के साथ खिलवाड़ किए जाने के समान है, जबकि यही कुशल सिक्ख बच्चा 'बीर खालसा दल' के साथ कई टी. वी. चेनलों पर इस कला का प्रदर्शन कर चुका है।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि 'गतका' सिक्ख कौम का प्राचीन व ऐतिहासिक रिवायती खेल है जो बनावटी जंगों-युद्धों के करतबों के रूप में खेला जाता है और इसे जीत तथा चढ़दी कला के प्रतीक के रूप में भी जाना जाता है। उन्होंने कहा कि सिक्ख धर्म की उच्च परंपराओं के अनुसार कृपाण जहां अमृतधारी सिक्खों का जरूरी अंग है, वहां आवश्यकता पड़ने पर मजलूमों की रक्षा के लिए भी उठाई जाती है। उन्होंने कहा कि कार्यक्रम के एक जज साजिद खान की इस हरकत से जाहिर होता है कि उसे सिक्ख कौम के शानदार इतिहास, खालसई परंपराओं एवं सिक्खों की युद्ध-कला का कोई ज्ञान ही नहीं है। जत्थेदार अवतार सिंघ ने 'कलर्स' टी. वी. चेनल के प्रबंधकों को लिखे पत्र में इस कार्यक्रम सम्बंधी शिरोमणि कमेटी को सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करने के साथ-साथ सिक्खों की भावनाओं को ठेस पहुंचाए जाने वाली इस कार्यवाही के लिए तुरंत माफी मांगने तथा साजिद खान (जज) को कार्यक्रम से बाहर निकालने के लिए कहा है। ऐसा न किये जाने की सूरत में कानूनी कार्यवाही की जाएगी।

जम्मू-कश्मीर में सिक्खों पर जुल्म बर्दाश्त नहीं होगा

अमृतसर। जम्मू-कश्मीर में कुछ शरारती तत्वों द्वारा सिक्ख बच्चों के केश कत्ल करके धर्म-परिवर्तन करने के लिए मजबूर किए जाने की घटनाओं का गंभीरता से नोटिस लेते हुए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने ऐसे रुझान को तुरंत रोकने सम्बंधी जम्मू-कश्मीर के मुख्यमंत्री को पत्र लिख कर दोषियों के खिलाफ सख्त कार्यवाही करने के लिए कहा है।

जत्थेदार अवतार सिंघ द्वारा लिखे पत्र का तुरंत जवाब देते हुए जम्मू-कश्मीर के मुख्यमंत्री के राजनैतिक सलाहकार स. दविंदर सिंघ राणा ने शिरोमणि कमेटी को विश्वास दिलाया कि जम्मू-कश्मीर में सिक्ख नौजवानों के केश कत्ल करने सम्बंधी घटित घटनाओं के दोषियों में से कुछ को गिरफ्तार कर लिया गया है। इस सम्बंधी कानूनी कार्यवाही की जा रही है तथा दोषियों को बख्शा नहीं जायेगा। स. राणा ने बताया कि मुख्यमंत्री ने विशेष रूप से पीड़ित सिक्ख परिवारों को मिलकर उनकी धार्मिक भावनाओं का सम्मान बनाये रखने तथा हर प्रकार की सुरक्षा का भरोसा दिया है।

दूसरी तरफ जत्थेदार अवतार सिंघ ने खुद भी सारी घटना की जानकारी प्राप्त करने के लिए अपने कार्यालय से सचिव स. दलमेघ सिंघ, अपर सचिव स. रूप सिंघ व स. सतबीर सिंघ पर आधारित

तीन-सदस्यीय समिति गठित कर मौका देखने के बाद पूरी रिपोर्ट देने को कहा है। उन्होंने कहा कि घटना की पूरी जानकारी मिलने के बाद पीड़ितों को इंसाफ दिलाने व दोषियों को और अधिक सख्त सजा दिलाने के लिए फिर से राज्य सरकार पर दबाव बनाया जाएगा।

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में बाबा बंदा सिंघ बहादर विषय पर सेमीनार आयोजित

कुरुक्षेत्र। हरियाणा सरकार की हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी तथा अखिल भारतीय बाबा बंदा सिंघ बहादर सिक्ख सम्प्रदाय ने मिलकर बाबा बंदा सिंघ बहादर की शख्सियतको दर्शाता 'सेमीनार' ८ अगस्त, २०१० को कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के सेनेंट हाल में आयोजित किया गया। सेमीनार में तीन विद्वानों ने बाबा जी के जीवन-चरित्र को प्रदर्शित करते पेपर पढ़े तथा तीन कवियों ने बाबा जी के जीवन पर आधारित कविताएं पढ़ कर उपस्थित जनसमूह को मंत्रमुग्ध कर दिया।

सेमीनार में पेपर पढ़ने वालों में कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के प्रो. अमरजीत सिंघ (कांग), पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला के डॉ. परमवीर सिंघ तथा प्रसिद्ध उपन्यासकार स. बलदेव सिंघ मोगा शामिल थे, जबकि कवियों में स. रजिंदर सिंघ जोश, स. गुरदिआल सिंघ निम्र तथा श्री फकीर चंद जलंधरी ने अपनी कविताएं पेश कीं। समूह वक्ताओं ने इस बात पर सहमति जताई कि बाबा बंदा सिंघ बहादर के जीवन के बारे में कुछ कथित इतिहासकारों ने जो भ्रांतियां उत्पन्न कर दी हैं उन्हें दूर कर बाबा जी के जीवन-चरित्र की खूबियों को ग्रहण कर उनके प्रति श्रद्धा अर्पित करनी चाहिए। सेमीनार की अध्यक्षता हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी के निदेशक श्री सी. आर. मौदगिल ने की तथा आए हुए दर्शकों व श्रोतागण का स्वागत एवं धन्यवाद किया। मुख्य अतिथि के रूप में कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के उप-कुलपति डॉ. डी. डी. एस. (संधू) उपस्थित हुए तथा उन्होंने हाल में बैठे नौजवानों एवं बुजुर्गों की उत्सुकता की भरपूर सराहना की। सेमीनार में विशेष रूप में उपस्थित बाबा बंदा सिंघ बहादर की १०वी. पीढ़ी के वंशज बाबा जतिंदरपाल सिंघ (रियासी-जम्मू) ने अपने अनमोल वचनों द्वारा संगत को सरशार किया। मंच-संचालन श्री शिव शंकर पाहवा ने बाखूबी ढंग से निभाया तथा बहुत ही सीमित समय में सारा कार्यक्रम सम्पन्न करवाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। जनसमूह से खचाखच भरे हाल में आए मेहमानों एवं प्रमुख शख्सियतों का सम्मान किया गया। हरियाणा पंजाबी साहित्य अकादमी के विशेष निमंत्रण पर पहुंचे 'गुरमति ज्ञान' के सम्पादक स. सिमरजीत सिंघ का अकादमी द्वारा तथा बाबा बंदा सिंघ बहादर सिक्ख सम्प्रदाय की ओर से विशेष सम्मान किया गया। सेमीनार में उपरोक्त गणमान्य व्यक्तियों के अलावा अखिल भारतीय बाबा बंदा सिंघ बहादर सिक्ख सम्प्रदाय के अध्यक्ष श्री संत कुमार जुनेजा व महासचिव श्री वेद प्रकाश मक्कड़ भी उपस्थित थे। शिरोमणि गु: प्र: कमेटी द्वारा प्रकाशित की जाती पत्रिकाएं 'गुरमति प्रकाश' तथा 'गुरमति ज्ञान' की प्रदर्शनी भी लगाई गई, जिसमें दोनों पत्रिकाओं के 'बाबा बंदा सिंघ बहादर विशेषांक' वितरित किए गए। भारी संख्या में लोग चंदा जमा कर 'गुरमति प्रकाश' व 'गुरमति ज्ञान' के सदस्य बने। सेमीनार में शामिल होने आए लोगों के बैठने, खान-पान तथा सेवा-संभाल का सारा काम बाबा बंदा सिंघ बहादर सिक्ख सम्प्रदाय की जिला करनाल की संगत द्वारा बड़ी विधिपूर्वक व तनदेही से किया। कुल मिलाकर सेमीनार बेहद सफल रहा तथा दर्शकों-श्रोताओं के मन पर अपनी अमिट छाप छोड़ गया।

मुद्रक एवं प्रकाशक स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। संपादक स. सिमरजीत सिंघ। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०९-२०१०